भोजन का अधिकार अभियान सहयोगी समूह, मध्यप्रदेश

ई–7/226, प्रथम तल, (धनवन्तरी काम्पलेक्स के सामने) अरेरा कालोनी, शाहपुरा, भोपाल, फोन : 0755– 4252789
ई मेल : rtfmp@rediffmail.com

दिनांक : 24 फरवरी, 2007

प्रिय साथियों,

एक छोटे से अंतराल के बाद आप तक 'अपडेट' पहुंच रहा है। निःसंदेह इस बीच बहुत कुछ घटित हुआ। कई ऐसी सूचनाएं या फिर समाचार होते हैं, जिसे तत्काल आप तक पहुंचाया जाना जरूरी होता है पर दूसरी ओर अभियान को गति देने व दबाव समूह के रूप में कार्य करने की भी व्यस्तताएं होती हैं।

मार्च एवं अप्रैल में दो महत्वपूर्ण आयोजन होने वाले हैं, जिसकी जानकारी इसमें दी गई है। 'भूख से मुक्ति अधिकार अभियान का तीसरा राष्ट्रीय अधिवेशन 6–8 अप्रैल को बोध गया (बिहार) में होने वाला है, जिसकी तैयारी में आपको अभी से लग जाना है। दूसरा आयोजन राष्ट्रीय जन स्वास्थ्य सम्मेलन है, जो कि भोपाल में 23–25 मार्च को होगा। भूख से मुक्ति से जुड़े कई ऐसे पहलू हैं, जो कि सीधे–सीधे जन स्वास्थ्य से जुड़े हैं।

इस अंक में एक महत्वपूर्ण सामग्री दी जा रही है, वह है डब्ल्यू.टी.ओ. से सम्बन्धित शब्दावली। चूंकि हम सामाजिक विकास के लिए कार्य करते हैं और हमें लगातार ऐसे शब्दों का इस्तेमाल करना पड़ता है, इसलिए उनके अर्थ के साथ–साथ चरित्र को भी समझना जरूरी है। वन अधिकारों पर मान्यता का कानून के प्रमुख प्रावधानों को भी इस अंक में दिया गया है। साथ ही कई ऐसे लेख हैं, जो ग्रासरूट स्तर पर खाद्य सुरक्षा से जुड़ी विसंगतियों को दर्शाते हैं।

उम्मीद है, आप सतत् संघर्षरत रहेंगे, जब तक लोगों को भोजन का अधिकार नहीं मिल जाता।

सहयोगी समूह
भोजन का अधिकार अभियान, म.प्र.

विषय पृष्ठ

1. भूख से मुक्ति अधिकार अभियान का तीसरा राष्ट्रीय अधिवेशन............ 02
2. 11वीं पंचवर्षीय योजना का आधार हो पोषण का अधिकार 03
3. डब्ल्यू.टी.ओ. से सम्बन्धित शब्द 10
4. एक राष्ट्रीय मानव की दुःखद त्रासदी 20
5. आदिवासियों पर फिर गहराया खाद्य संकट 22
6. रोजगार गारंटी कानून : अनुभवों का एक साल 24
7. कैसे होगा भूजल पुनर्भरण 25
8. वन अधिकारों पर मान्यता का कानून 27
9. दूसरी राष्ट्रीय जन स्वास्थ्य सभा की ओर 32
10. ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना, जिलों के चयन में विसंगतियां 34
10.सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर गठित समिति की सूचना 35
11.न्यायालय द्वारा आई.सी.डी.एस. के संदर्भ में दिये गये फैसले के अंश 36
12.जननी सुरक्षा योजना के संदर्भ में न्यायालय द्वारा दिये गये अंतरिम आदेश 37

<u>सहयोगी समूह</u>

राघवेन्द्र सिंह (म. प्र. जन अधिकार मंच, ग्वालियर), नीलेश देसाई (सम्पर्क, झाबुआ), उमेश वशिष्ठ (भूख एवं भय से मुक्ति का संघर्ष), सीमा–प्रकाश (स्पंदन), डॉ. मुन्नालाल कुरैचया (समहित विकास समिति), उमा चतुर्वेदी (सहयोग– सपोर्ट इन डवलपमेन्ट), सचिन कुमार जैन (विकास संवाद, भोपाल), संदीप नाईक (भोपाल), राघवेंद्र (जबलपुर),राजेश जैन (सिवनी), प्रशांत दुबे, अमीन चार्ल्स

भूख से मुक्ति का अधिकार अभियान

तीसरा राष्ट्रीय अधिवेशन

6 से 8 अप्रैल 2007, बोध गया, बिहार

प्रिय साथियों,

भूख से मुक्ति अधिकार अभियान का तीन दिवसीय तीसरा राष्ट्रीय अधिवेशन 6–8 अप्रैल 2007 को ''बोध गया'' (बिहार) में होने वाला है। अधिवेषन में भाग लेने के लिए हम आपको आमंत्रित करते हैं। देश भर में भोजन एवं काम के अधिकार के साथ जुड़ी हुयी संस्थाओं का इस अधिवेशन में भाग लेना लगभग तय है। देष में भोजन एवं काम के अधिकार को लेकर जमीनी स्तर पर हो रहे कार्यों के अनुभवों को आपस में साझा करना और आगामी गतिविधियों को तय करना अधिवेशन का मुख्य उद्देश्य है।

अधिवेशन में कई मुद्दों पर चर्चा किया जायेगा, जिनमें – भूमि अधिग्रहण एवं उसके प्रभाव, राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कानून, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, बच्चों के भूख से मुक्ति का अधिकार, सूचना का अधिकार, जीविकोपार्जन के साधनों का संरक्षण, भोजन के अधिकार से सम्बन्धित कानूनी पक्ष एवं अभियान का रुख प्रमुख रूप से शामिल हैं। भोजन के अधिकार के संदर्भ में होने वाले सामाजिक बहिष्कार एवं भेदभाव पर अधिवेशन में अलग से चर्चा होगी। यह एक गतिविधि आधारित आयोजन है, जिसमें एक साथ कई समानांतर कार्यशालाएं आयोजित होंगी, खुले अधिवेशन होंगे व सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुतियां होंगी।

आपसे अनुरोध है कि अधिवेशन में आने से पहले अपने क्षेत्र/जिले/राज्य स्तर पर इन मुद्दों पर कार्यशालाएं, बैठक व सम्मेलन आयोजित करें, जिससे कि अधिवेशन में जमीनी स्तर की संस्थाएं और समूह भी अधिवेशन में शामिल हो सकें। अधिवेशन में भाग लेने वाली संस्थाएं अपने दस्तावेजों, पोस्टर्स व अभियान से जुड़ी सामग्रियों को वितरित अथवा प्रदर्शित भी कर सकती हैं।

अभियान का पहला अधिवेषन भोपाल में अप्रैल 2004 को हुआ था, जिसकी मुख्य उपलब्धि थी – राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कानून के निर्माण के लिए अभियान की प्रक्रिया का शुरू होना। दूसरा अधिवेशन बादू (कोलकाता) में नवम्बर 2005 को हुआ था, जिसमें बच्चों के भोजन एवं पोषण के अधिकार के मामले में गति मिली और इस मामले पर केन्द्रित होकर अभियान चलाने से सबसे बड़ी सफलता तब मिली, जब दिसम्बर 2006 में सुप्रीम कोर्ट ने 0 से 6 वर्ष तक के बच्चों के लिए आंगनबाड़ी को सर्वव्यापीकरण करने का फैसला दिया।

तीसरे अधिवेशन का अनुमानित खर्च लगभग 3 लाख रुपये हैं। इस खर्च की पूर्ति अधिवेशन के दौरान लिए जाने वाले पंजीयन शुल्क (100 रुपये प्रति व्यक्ति, तीन दिनों के लिए भोजन और आवास) और स्वैच्छिक अनुदान से किया जायेगा। अतः आपके द्वारा दिया गया अनुदान हमें सहयोग प्रदान करेगा। सभी प्रतिभागियों से अनुरोध है कि वे अपने आने एवं जाने का खर्च स्वयं ही वहन करें। कृपया अपने आने–जाने की टिकटें अग्रिम रूप से आरक्षित करा लें, ताकि आपको परेषानी न हो। आप अपनी संस्था से भाग लेने वाले प्रतिभागियों की संख्या हमें पहले से जरूर बतायें, जिससे कि हम उनके रहने एवं खाने की व्यवस्था कर सकें।

अधिक जानकारी के लिए कृपया righttofood@gmail.com पर मेल करें अथवा 011–43501335 पर सम्पर्क करें या फिर www.righttofoodindia.org वेबसाईट को समय–समय पर देखते रहें।

अभिवादन सहित

गुरमिन्दर सिंह / स्फूर्ति रेड्डी
(सचिवालय, भूख से मुक्ति का अधिकार अभियान)

नोट : कृपया दिल्ली से बाहर के अनुदान चेक 500 रुपये से अधिक के भेजें क्योंकि बैंक द्वारा 75 रुपये सेवा प्रभार काट लिया जाता है।

11वीं पंचवर्षीय योजना का आधार हो पोषण का अधिकार

मध्यप्रदेष के परिप्रेक्ष्य में आलोचनात्मक विष्लेषण

• सचिन कुमार जैन

श्योपुर जिले के पतालगढ़ गांव में फरवरी 2005 में एक के बाद एक 13 बच्चों की कुपोषण के कारण मौत हुई थी। संघर्ष और बहस के हर मंच पर यह मुद्दा उठा। सर्वोच्च न्यायालय के आयुक्तों ने वहां आंगनबाड़ी खोलकर कुपोषण खत्म करने के निर्देष दिये किन्तु चूंकि कुपोषण सरकार का प्राथमिक मुद्दा नहीं है इसलिये वहां आंगनबाड़ी नहीं खोली गई। परिणाम यह हुआ कि मार्च से मई 2006 के बीच वहां फिर 10 बच्चे असामयिक मौत के षिकार हो गये। इस गांव में पिछले तीन सालों में केवल पांच दिन का सरकारी रोजगार ग्रामीणों को मिला है, अस्पताल 63 किलोमीटर दूर है, मध्यान्ह भोजन और आंगनबाड़ी योजना का कोई अस्तित्व नहीं है क्योंकि यहां की जनसंख्या 700 से कम है। प्रसव के दौरान यहां हर 10 में से एक महिला की मृत्यु हो जाती है क्योंकि उन्हें भोजन नहीं मिलता है। जब एक नवजात षिषु की मां गुड्डी से पूछा गया कि अब इस बच्चे को आप अपना दूध कब पिलाओगी? तो उसका जवाब था – ''कहां से पिलाऊंगी? जब मैंने ही 7 दिन से कुछ नहीं खाया है तो दूध कहां से उतरेगा?'' वास्तव में संकट असुरक्षित मातृत्व से शुरू होता है और कुपोषण की कभी न मिटने वाली इबारत का रूप ले लेता है।

फिर एक व्यवस्था बच्चों की दोस्त कैसे हो सकती है, जब वह बचपन को समझने और स्वीकार करने के लिये ही तैयार नहीं है। बहुत ही सामयिक उदाहरण है एक गांव का। झाबुआ जिले का आदिवासी बहुल कोटड़ा गांव 12 फलियों में बंटा हुआ है। परन्तु कुपोषित बच्चों की पहचान और उपचार के लिये चलाये जा रहे बाल संजीवनी कुपोषण निवारण अभियान के तहत इस में भी केवल एक ही दिन मेला लगा ताकि औपचारिकता पूरी की जा सके। अंततः सरकार यह मानने लगी है कि कुपोषण गंभीर है परन्तु इससे निपटने के लिये उसके पास प्रतिबद्धता नहीं है। यही कारण है कि योजना बनाते समय इस वास्तविकता को नजरअंदाज कर दिया गया कि जिस समय यह अभियान चलाने की योजना बनाई गई है उस समय सोयाबीन की कटाई के लिये आधे से ज्यादा मजदूर और छोटे किसान गांव में रहेंगे ही नहीं; तब कुपोषण की जांच किसकी होगी? वास्तव में बाजारवाद की हितैषी सरकार समुदाय की आत्मसम्मान की भावना का फायदा उठाती है। लोग नहीं चाहते हैं कि उन्हें भूखे के रूप में पहचाना जाये। वे अपमानित महसूस करते हैं। भूख तो तन को पीड़ा देती है पर भूखा कहे जाने पर मन टूट जाता है। ऐसे में वे जंगली वनस्पति, जड़ें या पत्ते खाते हैं ताकि मुंह को चबाने का अहसास हो और पेट को भरे होने का। फिर भले ही उससे शरीर को कोई ऊर्जा न मिलती हो। इस तरह के खाने से फेफड़ों में अकड़न, आंतों में सूजन, डायरिया, संक्रमण और गैस्ट्रोएनटरर्टिस होता हे। जब वे मर जाते हैं तो सरकार कहती है कि वे भूख से नहीं बीमारी से मरे हैं। ऐसी मौतों में सबसे ज्यादा संख्या बच्चों की होती है।

कुपोषण और बच्चों के पोषण के अधिकार का मुद्दा आज के दिन बहुत अहम् इसलिये हो जाता है क्योंकि भारत की केन्द्रिय और राज्य सरकारें राष्ट्र के विकास के लिये 11वीं पंचवर्षीय योजना की रूपरेखा बनाने में जुटी हुई हैं। विकास की जिस सोच का सरकारों पर आज गहरा प्रभाव है वह विकास की दर को प्रतिषत में मापती है। योजना आयोग ने 11वीं पंचवर्षीय योजना के लिये जो दृष्टिपत्र जारी किया है उसके अनुसार सड़कें, इमारतें और तालाब बनाने वाले कार्यक्रमों से विकास का लक्ष्य हासिल किया जायेगा; किन्तु योजना आयोग यह भूल रहा है कि गरीबी और भुखमरी के कारण समाज का दो तिहाई तबका इतना कमजोर हो चुका है वह इन इमारतों– सड़कों का उपयोग अपनी जरूरतें पूरी करने के लिये नहीं कर पायेगा। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी कानून रोजगार के संकट से निपटने के लिये लागू किया गया किन्तु शुरूआती छह माह के अनुभव हमें बताते हैं कि इस कानून के अन्तर्गत मजदूरों को शारीरिक श्रम के आधार पर न्यूनतम मजदूरी मिलेगी। न्यूनतम मजदूरी पाने के लिये उन्हें एकनिर्धारित लक्ष्य (टास्क) पूरा करना होगा। पर मध्यप्रदेष के षिवपुरी, उमरिया और खण्डवा जिले के जरूरतमंद आदिवासी इतना शारीरिक श्रम नहीं कर पा रहे हैं। कारण साफ है; वे शारीरिक रूप से इतने सक्षम नहीं हैं कि वे 100 घनफीट की खुदाई का काम सात घंटे में कर सकें। जिस गरीबी के अंधेरे को मिटाने के लिये रोजगार कानून आया वहीं अब कअव्यावहारिक सोच के चलते शोषण का जरिया बन रहा है। ऐसा नहीं है कि मजदूर श्रम नहीं करना चाहता है बल्कि सच यह है कि कुपोषण के ऊंचे स्तर के चलते वह भारी श्रम नहीं कर पा रहा है। ऐसे में जरूरी हो जाता है कि अगली पंचवर्षीय योजना में पोषण के अधिकार को कार्ययोजना का आधार बनाया जाये। इसके अभाव में सरकार यदि 10 प्रतिषत की विकास दर यदि हासिल कर भी लेगी तो निष्चित रूप से उसके कोई फायदे नहीं होंगे। कुपोषित बचपन से कमजोर वयस्क का ही निर्माण होगा और कमजोर वयस्क निर्माण में कोई भूमिका नहीं निभा पायेगा।

सन् 1975 में यह मानते हुये कि कुपोषण और सतत् बरकरार रहने वाली भुखमरी की स्थिति को मिटाये बिना स्वस्थ्य, उत्पादक और समतामूलक समाज स्थापित नहीं किया जा सकता है, एकीकृत बाल विकास परियोजना शुरू की गई। कारण साफ है कि जब बचपन ही लुंज–पुंज और कमजोर होगा तो युवा कैसे सषक्त हो सकता है। तब एक व्यापक नजरिये को आधार बनाकर आंगनबाड़ी कार्यक्रम की शुरूआत की गई थी। एक लम्बे दौर तक इस कार्यक्रम को दोयम दर्जे का महत्व दिया जाता रहा। 31 साल गुजर गये पर बचपन की भुखमरी को समाप्त नहीं किया जा सका। निःसंदेह सरकारी प्रचार वाक्य के अनुसार यह दुनिया का सबसे बड़ा कुपोषण निवारण अभियान है और यही कारण है कि यह दुनिया का सबसे अव्यावहारिक ढंग से चलाया गया अभियान भी है। इसका प्रमाण यह है कि वर्ष में दो बार चलने वाला यह अभियान ऐसे महीनों में चलाया जाता है जब गांव के लोग फसल काटने पलायन पर गये होते हैं। इसमें पारिवारिक खाद्य सुरक्षा की बात न होकर कुपोषित बच्चों के गरीब परिजनों को पौष्टिक भोजन के उपयोग की सलाह दी जाती है। मध्यप्रदेष सरकार के लिये आज भी यह राजनैतिक प्राथमिकता का मुद्दा नहीं है। अभी केवल 23 फीसदी बच्चों को ही पोषण और स्वास्थ्य की सीमित सेवायें मिल रही हैं।

वहीं दूसरी ओर अधोसंरचनात्मक स्थिति भी राजकीय उदासीनता के तर्क को ठोस रूप प्रदान करती है। राज्य सरकार यह मानती है कि बच्चों में कुपोषण की स्थिति से निपटने के लिये उसे अब भी 50 हजार आंगनबाड़ियों की जरूरत है परन्तु केन्द्र सरकार की अनुमति के बिना एक भी आंगनबाड़ी स्थापित नहीं की जा सकती है क्योंकि बजट केन्द्र से आता है। इन परिस्थितियों में राज्य सरकार ने अपनी ओर से राज्य बजट आंगनबाड़िया खोलने की प्रक्रिया शुरू नहीं की। सर्वोच्च न्यायालय के आदेषों के अनुसार वर्तमान मममें मौजूद 6 लाख आंगनबाड़ियों की संख्या बढ़ाकर 14 लाख करने की जरूरत है। इसके बाद 29 दिसम्बर 2004 के केन्द्रीय केबिनेट ने 1.88 लाख नई आंगनबाड़ियां खोलने का निर्णय तो ले लिया परन्तु अब तक इसमें औपचारिक निर्देष जारी नहीं हो पाये। जिस प्रषासनिक प्रक्रिया का पालन सरकार करती है उसके अनुसार मध्यप्रदेष के वंचित उपेक्षित बच्चों को जून 2008 से पहले यह आंगनबाड़ियां देखना नसीब नहीं होगा।

एक अहम् मुद्दा आंगनबाड़ियों के सामाजिक चरित्र से जुड़ा हुआ है। सरकार ने कभी यह प्रयास नहीं किया है कि आंगनबाड़ी एक बाल विकास सामाजिक केन्द्र के रूप में समाज द्वारा स्वीकार किया जाये। यहां तक कि योजना आयोग द्वारा समय–समय पर जारी किये गये चार आदेषों से यह पता चलता है कि बुनियादी रूप से यह गरीब, वंचित, भूखे और उपेक्षित बच्चों का केन्द्र मानने की परम्परा डाली गई। इस धारणा का प्रभाव यह हुआ कि गांव में आंगनबाड़ी केन्द्र के आदर्ष रूप को विस्मृत कर दिया गया। यहां आने वाले बच्चों के परिवारों को एक नये वर्ग के रूप में पहचाना जाने लगा। छतरपुर के जटाषंकर बड़ागांव में सालों आंगनबाड़ी चल रही है परन्तु फिर भी वहां कुपोषण के कारण पांच दलित बच्चों की मृत्यु हो गई। अध्ययन करने पर पता चला कि उच्च वर्ग के मोहल्ले में स्थापित आंगनबाड़ी में दलित बच्चों को जाने की अनुमति नहीं है। उस केन्द्र की कार्यकर्ता ने दलित बच्चों के लिए कुछ कोषिष भी की पर राज्य आर समाज दोनों ने ही उसके साथ नकारात्मक व्यवहार किया।

आंगनबाड़ी केन्द्रों में आमतौर पर पोषण आहार नियमित रूप से वितरित नहीं होता है। कारण है बजट की कमी, प्रतिबद्धता का अभाव और भ्रष्टाचार। जब आंगनबाड़ी को साधन और संसाधन नहीं मिलते है तो उसे स्थानीय समुदाय नकारात्मक नजरिये से देखने लगता है। सीधी जिला मध्यप्रदेष का सबसे ज्यादा कुपोषण प्रभावित जिला रहा हे। परन्तु वहां आंगनबाड़ी कार्यक्रम की जमीनी स्थिति यह है कि सीधी ब्लाक की 187 आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं को 16 से 28 माह से मानदेय का भुगतान नहीं हुआ है। फिर भी उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे बच्चों को घर से लायें, उन्हें नहलायें, खाना पकायें, खिलायें, 8 रजिस्टर भरें, सर्वेक्षण करें, गर्भवती–धात्री महिलाओं की देखभाल करें पर यह अपेक्षा न करें कि राज्य से उन्हें निर्धारित साधन–संसाधन मिलें। इतना ही नहीं जब वे आंगनबाड़ी भवन के किराये का भुगतान नहीं कर पाई तो 9 भवनों के स्वामियों ने उनका सामान बर्तन और रजिस्टर जब्त करके केन्द्र खाली करा लिया। वे तमाम उपेक्षाओं के बावजूद बच्चों को सामाजिक संरक्षण देना चाहती हैं परन्तु जब वे गंभीर रूप से बीमार बच्चों को ए.एन.एम. या शासकीय चिकित्सालय भेजती हैं तो उन्हें वहां स्वास्थ्य विभाग की उपेक्षा का षिकार होना पड़ता है। वास्तव में डिण्डोरी जिले के किवाड़ गांव का उदाहरण राज्य के नजरिये की व्याख्या कर देता हे। इस गांव में ग्यारह माह की उम्र के दो बच्चों की कुपोषण जन्य बीमारी से अकाल मृत्यु हो गई। जब इस प्रकरण की सर्वोच्च न्यायालय के आयुक्त के निर्देषों पर जांच की गई। सरकार ने बिना स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रतिनिधित्व के कराई गई इस जांच रिपोर्ट में कहा कि बच्चे कुपोषित थे परन्तु उनकी मौत माता–पिता की लापरवाही से हुई है। यह बात सही है कि आंगनबाड़ी कार्यकर्ता को छह माह से मानदेय नहीं दिया गया था, वहां पोषण आहार भी नहीं पहुंचा था और इस मामले में आंगनबाड़ी कार्यकर्ता को पद से हटा दिया गया है। अब समझने वाली बात यह है कि बच्चों की मौत के लिये प्रषासन की जिम्मेदारी तय होना चाहिये या सरकारी अपमान की षिकार आंगनबाड़ी कार्यकर्ता की। सरकार आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं के चयन की प्रक्रिया में गरीब, दलित आदिवासी या विधवा महिला को चुनती है ताकि उनका शोषण किया जा सके और विपरीत परिस्थितियों में अपराधी

घोषित करके अपना दामन बचाया जा सके। किवाड़ गांव का यह उदाहरण नीतिगत चरित्र की व्याख्या कर देता है कि जब व्यवस्था की लापरवाही से आपदा आती है तो कभी भी बड़े अफसरों और नीति बनाने वालों की जवाबदेही तय नहीं होगी।

आज 53 लाख कुपोषित बच्चों को बेहतर पोषण आहार और स्वास्थ्य सुविधायें देने के लिये एक बच्चे पर 3.25 रूपये प्रतिदिन खर्च करने की जरूरत है परन्तु 1991 में किये गये एक रूपये के प्रावधान का अब तक पालन किया जाता रहा है। 15 वर्ष में मंत्रियों, भारतीय प्रषासनिक एवं पुलिस सेवा के अधिकारियों, यहां तक कि बाबुओं के मंहगाई भत्तों, में 3 से 5 बार बढ़ोत्तरी हो चुकी है पर बच्चों पर होने वाला व्यय उतना ही है। खण्डवा के सैदाबार गांव में कोरकू आदिवासी बहुल कस्बे में आंगनबाड़ी ही नहीं थी क्योंकि 700 की जनसंख्या पर एक ही आंगनबाड़ी खोली जा सकती है और आंगनबाड़ी में 80 बच्चों को नामांकित करने का लक्ष्य उच्च वर्ग बहुल कस्बे से ही पूरा हो गया था, इसलिये आदिवासी बच्चों को वहां दाखिल नही किया गया। परिणाम स्वरूप एक ही मोहल्ले के 11 बच्चे मौत के षिकार हो गये। जनसंख्या का विचित्र प्रावधान बहुत तेजी से बच्चों की जान ले रहा है। ऐसा तय है कि मापदण्ड बनाने वाले अधिकारी और विषेषज्ञ आदिवासी इलाकों की संरचना के बारे में बुनियादी बात नहीं जानते हैं कि आदिवासी समुदाय छोटे–छोटे समूहों में निवास करते हैं। ज्यादातर इलाके जंगली एवं दुर्गम होते हैं। ऐसे में वहां 700 की आबादी की बसाहट का मतलब होता है 8 से 10 किलोमीटर का क्षेत्रफल। क्या ऐसी परिस्थिति में 6 साल से कम उम्र के बच्चे और गर्भवती महिलाएं आंगनबाड़ी तक पहुंच सकती हैं।

अब आंगनबाड़ी की स्थापना के लिये जनसंख्या का प्रावधान हटाने की जरूरत है। सरकार तय करे कि हर बसाहट में एक आंगनबाड़ी या फिर लोगों की मांग पर आंगनबाड़ी की तत्काल स्थापना की जायेगी। सुप्रीम कोर्ट ने भी निर्देष दिया है कि हर गांव में ही नहीं, हर बस्ती में आंगनबाड़ी खोलने की जिम्मेदारी सरकार की है। परन्तु इस निर्देष को भी पालने के लिए कई बार कें बजटों में कोई संकेत नहीं दिये हैं। अभी प्रदेष में 49600 आंगनबाडियां हैं जबकि जरूरत 1.10 लाख की है। प्रदेष में नई आंगनबाड़ी खुलवाने के लिए बच्चों की मौतें होना जरूरी माना गया है। मायने साफ है कि ये कदम उठाने के लिए इंसानियत की जरूरत है, जिसके अवषेष कहीं दिखाई नहीं पढ़ रहे हैं। सवाल केवल बजट का ही नहीं है बल्कि जिम्मेदारी और जवाबदेहिता का भी है।

विकास की परिभाषा का मूल उद्देष्य समाज को एक समतामूलक बेहतर स्थिति प्रदान करना है। ऐसे में व्यापक सैद्धान्तिक योजना बनाते समय सबसे पहले सरकार को यह स्वीकार करना होगा कि पोषण की कमी से एक व्यक्ति का मानसिक और शारीरिक विकास बाधित होता है। मध्यप्रदेष में 60 प्रतिषत बच्चों का जन्म के समय ही वजन ढाई किलो से कम होता है जिसके कारण उनकी दिमागीय संरचना का विकास नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। इसी कारण उसके सीखने (बचपन से) और समझने की ताकत नहीं बढ़ पाती है। ऐसे में जब हम इन बच्चों की षिक्षा की बात करते हैं तो वास्तव में पोषण की कमी के फलस्वरूप षिक्षा से विकास की सोच बेमानी हो जाती है। और जब षिक्षा की स्थिति का विष्लेषण होता है तब बीच में ही स्कूल छोड़ने की प्रवृत्ति के बारे में भांति–भांति के तर्क दिये जाते हैं। स्पष्ट रूप से पोषण की कमी से सीखने की क्षमता बहुत कम होती है जिससे बच्चे मुख्यधारा की षिक्षा व्यवस्था में टिक नहीं पाते हैं और जब वे षिक्षा व्यवस्था से बाहर हो जाते हैं तो उन्हें सीखने के अवसर भी नहीं मिलते हैं। जिससे उन्हें भविष्य में रोजगार और आजीविका की असुरक्षा का सामना करना पड़ता है। यह असुरक्षा उन्हें और ज्यादा गंभीर कुपोषण की दिषा में बढ़ाती है। एक तरह से यहीं से कुपोषण एक दुष्चक्र का रूप ले लेता है।

बजट की कमी

वर्ष 2001 से 2005 तक कुपोषण से निपटने के लिये चलाई गई योजना (एकीकृत बाल विकास परियोजना) का हश्र क्या हुआ है; इसका मध्यप्रदेष के परिप्रेक्ष्य में व्यावहारिक विष्लेषण किया जा सकता है। इस अविध में (जो कि नवीं पंचवर्षीय योजना से दसवीं पंचवर्षीय योजना में प्रवेष का दौर था) महिला एवं बाल विकास विभाग को कुल 1685.64 करोड़ रुपये का बजट आवंटित किया गया। इस आवंटित राषि में से राज्य विभाग 1210.34 करोड़ रुपये ही खर्च कर पाया यानी 475.30 करोड़ तो उपयोग ही नहीं हो सके। एक तरह से पांच में से दो वर्ष का बजट खर्च ही नहीं हो पाया। जबकि वहीं दूसरी ओर जब व्यवस्था को ठोस और ज्यादा समुदाय आधारित बनाने की बात कही जाती है तो सरकार बजट की कमी का तर्क देती है। मध्यप्रदेष के संदर्भ में सरकार को आज यह सुनिष्चित करना होगा कि इस राज्य की छवि को बीमारू राज्य की छवि से यदि मुक्त कराना है तो ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में पोषण आहार के लिये 6500 करोड़ (तीन रुपये प्रति बच्चा प्रतिदिन), आंगनबाड़ियों को रोचक बनाने के लिये 928.40 करोड़ रुपये का प्रावधान करें।

31 वर्षों से संचालित हो रही आईसीडीएस योजना की सफलता की दर 0.25 प्रतिषत प्रतिवर्ष रही है और इस धीमी दर का कारण यह है कि पोषण की कमी के मुद्दे को राजनैतिक हलकों में गंभीरता के साध नहीं स्वीकार किया गया। पिछले पांच वर्षों में मध्यप्रदेष में पोषण आहार कार्यक्रम के हितग्राही के रूप में 253.84 लाख बच्चों और महिलाओं की पहचान की गई थी। इन्हें पोषण आहार उपलब्ध कराने के लिये 741.05 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था परन्तु सरकार ने केवल 313.93 करोड़ रुपये खर्च करने में रुचि दिखाई। मध्यप्रदेष के महालेखाकार द्वारा किये गये अंकेक्षण यह अधिकृत रूप से घोषित करते हैं कि इसी अवधि का विष्लेषण स्पष्ट करता है कि यह कार्यक्रम 62 से 52 फीसदी बच्चों और 46 से 59 प्रतिषत गर्भवती–धात्री महिलाओं तक नहीं पहुंचा है। प्रदेष की स्थिति षिषु मृत्यु और मात् मृत्यु दर के मामले में बहुत ही शर्मनाक है। अपेक्षा यह की जाती है कि महिला एवं बाल विकास आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं के जरिये गांवों में होने वाली षिषु और मातृ मृत्यु पर नजर रखेगा और स्वास्थ्य विभाग से समन्वय स्थापित कर जरूरी कदम उठाये जायेंगे। वर्ष 2001 से 2005 की अवधि में मध्यप्रदेष में 6.10 लाख बच्चों (एक वर्ष से कम उम्र के) और 65 हजार महिलाओं की प्रसव से जुड़े कारणों से मृत्यु हुई परन्तु महालेखाकार अपनी रिपोर्ट में कहते हैं कि सरकार को भेजी जाने वाली मासिक प्रगति प्रतिवेदन (एमपीआर) में गांव में होने वाली षिषु–मृत्यु व मातृ मृत्यु का जिक्र नहीं होता है।

निगरानी व्यवस्था –

निगरानी व्यवस्था तो जैसे चरमरा गई है और लगता है कि सोच–समझकर इस व्यवस्था को खोखला किया गया है। एकीकृत बाल विकस परियोजना को संचालित करने में ग्राम सभा और पंचायतों को सुझाव देने के अधिकार हैं, उन्हे स्वीकार–अस्वीकार करने का हक अफसरों का ही है। जब पोषण आहार आंगनबाड़ी केन्द्र पर पहुंचेगा तो पंचायत को यह देखना है कि पोषण आहार बंटे, किन्तु इस सच्चाई से उनका कोई वास्ता नहीं होगा कि गांव में सालभर में से 9 महीने आहार पहुंचता ही नहीं है। आंगनबाड़ी गांव की स्थिति पर सूक्ष्म निगरानी रखने और उसे सहज बनाने का माध्यम है। विभागीय संरचना में आंगनबाड़ी सुपरवाईजर 20 से 30 आंगनबाड़ियों और विकासखण्ड स्तर पर बाल विकास परियोजना अधिकारी के बीच समन्वय की जिम्मेदारी निभाती है परन्तु प्रदेष में स्वीकृत 2063 सुपरवाईजर के पदों में से 549 पर खाली पड़े हैं। और अब यह सुनाई दे रहा है कि सरकार जमीनी अमला बढ़ाने के बजाये उपसंचालक और उससे ऊपर के नये पद सृजित करने की योजना बना रही है यानी सेना कम होहगी और सेनापति ज्यादा।

इसी तरह पोषण आहार की आपूर्ति का मासला भी एक गंभीर रूप लेकर सामने आया हैं वर्ष 2002 में सरकार ने यह निर्णय लिया था कि आंगनबाड़ियों को पोषण आहार भेजने का काम दलित–आदिवासी महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों को सौंपा जायेगा। इससे 750 समूहों को फायदा होने वाला था किन्तु वर्ष 2006 में सरकार ने नीति फिर बदल दी। अब निजी निर्माता डेढ़ सौ करोड़ रुपये का पोषण आहार बनायेगें और आंगबाड़ियों को भेजेंगे। पिछले पांच वर्षों के अनुभवों के बारे में सरकार कहती है कि दलित आदिवासी समूह अभी पोषण आहार बनाने में सक्षम नहीं है पर महालेखाकार का अध्ययन कहता है कि पोषण आहर की आपूर्ति में दो सालों में ही 20 करोड़ रुपये का घोटाला नजर आता है क्योंकि जिन स्वयं सहायता समूह वास्तव में पिछड़े समूहों की महिलायें नहीं चला रही हैं बल्कि आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, ठेकेदार और अफसरों के द्वारा बनाये गये समूह पोषण आहार लील रहे हैं। और सजा भुगत रहे हैं दलित–आदिवासी समूह। पोषण का अधिकार कार्यक्रम क्रियान्वित करने और निगरानी करने में स्वास्थ्य विभाग की जवाबदेय भूमिका अभी भी तय की जाना शेष हैं। मध्यप्रदेष का अनुभव माथे पर बल ला देता है क्योंकि यहां कुपोषण की समस्या से निपटने के लिये होने वाले सीमित प्रयासों में भी स्वास्थ्य विभाग की किंचित मात्र ही भूमिका नजर आई है। इस भूमिका की पहले जांच होना चाहिये और फिर उसमें जवाबदेहिता तय की जाना चाहिये। आष्चर्य की बात है कि प्रदेष स्वास्थ्य नीति षिषु मृत्यु दर कम करने की बात कहती है किन्तु कुपोषण को मिटाने का लक्ष्य उसकी नीति का हिस्सा नहीं है।

निगरानी व्यवस्था को जवाबदेहिता के साथ लागू करने की जरूरत है। 1975 में जन्में एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम की उम्र अब 31 साल की हो चुकी है और विष्लेषण यह कहते हैं कि कुपोषण, मातृ – षिषु मृत्यु, किषोरी स्वास्थ्य और टीकाकरण जैसे महत्वाकांक्षी दायित्वों को पूरा करने के लिये लागू की गई इस योजना की सफलता की दर 0.25 प्रतिवर्ष रही है। ऐसा नहीं है कि भवन और पोषण आहार की कमी के कारण 31 साल में 12 प्रतिषत कुपोषण ही कम हो पाया। वास्तविकता यह है कि इन लक्ष्यों को हासिल करने के लिये जुटने की राजनैतिक प्रतिबद्धता भी कहीं नजर नहीं आई।

पिछले 25 वर्षों में मध्यप्रदेष की सरकारों ने प्राथमिकता के साथ विकास के लिये औद्योगिकीकरण की नीति को लागू किया। इस नीति से न तो प्रदेष में उत्पादक औद्योगिकीकरण हो पाया न ही कुपोषण और अन्य पोषण के संकट को चुनौती ही दी जा सकी। अब 11वीं पंचवर्षीय योजना में सरकार को पोषण की कमी को दूर करना अपना प्राथमिक लक्ष्य रखना चाहिये। इससे स्वास्थ उत्पादक बढ़ेगी। सरकार को स्वीकार करना होगा कि बीमार बच्चों से बीमार युवा

पीढ़ी का निर्माण होगा और बीमार युवा पीढ़ी राज्य के सपनों को पूरा नहीं कर पायेगी। यह विष्वबैंक से आयातित विचारधारा है कि विकास से पोषण की कमी दूर होगी। पर वास्तविकता यह है कि पोषण की कमी जब तक रहेगी विकास नहीं हो पायेगा। यहां श्रीलंका जैसे गृह युद्ध से ग्रस्त देष का उदाहरण रख देना निरर्थक नहीं है। श्रीलंका में पिछले तीन दषकों से अषांति का वातावरण बना हुआ है किन्तु समाज और राज्य ने महिलाओं, बच्चों के पोषण के अधिकार को संरक्षित किया जिससे तमाम विपदाओं के बावजूद भी वहां कुपोषण और मातृ मृत्यु की दर बिल्कुल नगण्य है यानी भूख से मृत्यु की संभावनायें मध्यपदेष की तुलना में साढ़े पांच गुना कम होती है।

यह सही है कि पारिवारिक खाद्य सुरक्षा को दूर किये बिना कुपोषण की स्थिति से निजात नहीं पाई जा सकती है पर यह आत्मविष्लेषण का विषय है कि सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक प्रतिबद्धताओं के अभाव में समुदाय आधारित विकास का नजरिया ही नहीं बन पाया। विकास की नीतियों से राज्य के एक खास वर्ग का तीव्र विकास हुआ किन्तु एक बड़े वर्ग के हाथों से आजीविका के संसाधनों का अधिकार भी छीन लिया गया। देष के भीतर का ही तुलनात्मक विष्लेषण स्थिति को अधिक स्पष्ट कर सकता है। भारत के दक्षिणी राज्यों केरल और तमिलनाडु में बच्चों के पोषण का अधिकार 1970 के दषक में एक राजनैतिक मुद्दा बना था तब से वहां एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम वास्तव में बच्चों के जीवन में एक जिम्मेदार भूमिका निभा रहा है। जबकि मध्यप्रदेष की ताजा सच्चाई यह है कि 6 वर्ष तक की उम्र के बच्चों को जहां हर रोज 1200 से 1700 कैलोरी ऊर्जा का भोजन मिलना चाहिये वहां आज उन्हें 758 कैलोरी ऊर्जा का भोजन ही मिल पा रहा है। एक मायने में उन्हें हर रोज केवल एक समय का भोजन मिल रहा है। यह स्थिति आज पैदा नहीं हुई है बल्कि सालों से चली आ रही है। भरपेट भोजन न मिल पाने के कारण ही आज प्रदेष के मजदूर रोजगार योजनाओं में तय किया गया मजदूरी का लक्ष्य पूरा नहीं कर पा रहे हैं जिसके कारण उन्हें 30 से 50 फीसदी मजदूरी का कम भुगतान होता है।

प्रदेष में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना ने सकारात्मक ढंग से गति पकड़ना शुरू कर दिया है। मध्यप्रदेष रोजगार गारण्टी परिषद इस योजना के कार्यों में आंगनबाड़ी भवनों के निर्माण का काम भी जोड़ने की पहले कर देष के सामने एक उदाहरण पेष कर सकती है। सरकार को यह स्वीकार करना होगा कि रोजगार गारण्टी योजना मानव विकास की परिभाषा को समुदाय के बीच क्रियान्वित करने का काम करे।

राज्य के व्यवहार से स्पष्ट होता है कि वह भूमण्डलीकरण के दौर में बच्चों की जिम्मेदारी नहीं लेना चाहती है। यही कारण है कि सर्वोच्च न्यायालय के इस आदेष के बाद भी आंगनबाड़ियों के पोषण आहार की आपूर्ति में ठेकेदारों का उपयोग नहीं होगा। पोषण आहार की आपूर्ति केन्द्रीयकृत न होकर स्वयं सहायता समूह या महिला मण्डलों के जरिये होगी, मध्यप्रदेष सरकार ने यह काम ठेकेदारों को देना शुरू कर दिया। इतना ही नहीं पोषण आहार की स्थानीय समुदाय आधारित विकल्पों को सम्मन देने के बजाये वे रिच एनर्जी फूड की आपूर्ति का निर्णय ले चुके हैं। सरकार मानती है कि बच्चों को ऊर्जा देने वाला पोषण आहार केवल बहुराष्ट्रीय कम्पनी ही तैयार कर सकती है। यह बहुत ही सूक्ष्म किन्तु महत्वपूर्ण बात है कि जब तक समुदाय को पता ही नहीं होगा कि उसके अधिकार क्या है। तब तक वह उनका उपयोग भी नहीं कर सकते हैं। यह बात आंगनबाड़ियों के संदर्भ में मध्यप्रदेष पर बखूबी लागू होती है। 83 फीसदी ग्रामीणों को अब तक यह पता नहीं चल पाया है कि आंगनबाड़ी से किस तरह की सेवाये मिलती हैं। वे यही मानते हैं कि बच्चे सम्मानपूर्वक जियें या न जियें, पर मरने न पायें यह कोषिष होती रहना चाहिये। और जब यह कोषिष असफल हो जाती है तो समुदाय की प्रतिनिधि के तौर पर जिम्मेदारी निभाने की कोषिष कर रहे कार्यकर्ताओं को कटघरे में खड़ा कर दिया जाता है। पर व्यवस्था वही रहती है गैर जवाबदेय और धरातल से दूर।

वास्तव में आने वाली पंचवर्षीय योजना में पोषण के अधिकार के संदर्भ में सरकार को दो स्तरों पर प्रतिबद्धतायें तय करने की जरूरत है। पहले स्तर पर तो यह तय करना होगा कि एकीकृत बाल विकास योजना का दर्षन बदले। सरकार को यह सिद्ध करना होगा कि आज के परिदृष्य में आंगनबाड़ी केन्द्र हर बच्चे के विकास का केन्द्र बने न कि किसी खास वर्ग के बच्चों का। इसे सामाजिक–आर्थिक वर्गभेद की अवधारणा से निकालना होगा। दूसरे स्तर पर सरकार को तय करना होगा कि देष की हर बसाहट में सभी साधनों से सम्पन्न आंगनबाड़ी की स्थापना हो और यह किसी एक सरकारी विभाग का दायित्व न हो बल्कि पंचायत एवं ग्रामीण विकास, स्कूल षिक्षा, स्वास्थ्य, वित्त, आदिवासी विकास जैसे विभागों की स्पष्ट भूमिकायें इस योजना में तय हों। जहां तक आर्थिक संस्थाधनों की जरूरत का सवाल है, सरकार को अपने दस्तावेज के पहले वाक्य में यह कहना चाहिये कि इस योजना के लिये किसी भी तरह का आर्थिक संकट नहीं आने दिया जायेगा। आंगनबाड़ी कार्यकर्ता से जिस तरह के काम की अपेक्षा की जाती है उसके अनुरूप न तो उसे मानदेय दिया जाता है न ही सम्मान और न ही प्रषिक्षण। वह जनगणना का भी सर्वे कर रही है और षिक्षा का भी; एक तरह से वह शोषितों की नई जमात का रूप ले रही है। कुपोषण और स्वास्थ्य के संदर्भ में उनकी भूमिका के संदर्भ में आंगनबाड़ी

कार्यकर्ता को एक सरकारी बाबू के बजाये रचनात्मक कार्यकर्ता की भूमिका निभाने का अवसर दिया जाना चाहिये।

वर्तमान परिस्थितियों में कुपोषण मिटाने के लिये हो रहे प्रयासों में व्यापक नीतिगत बदलाव करने की जरूरत है :–

उद्देष्यों से भटकाव रोकने की कोषिष –

बच्चों में कुपोषण की दर्दनाक समस्या को समाप्त करने के लिये एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम एक व्यापक प्रयास है। शून्य से छह वर्ष तक के बच्चों के जीवन को सुरक्षित रखकर ही विकास की प्रक्रिया को सकारात्मक संदर्भों में आगे बढ़ाया जा सकता है। आईसीडीएक योजना में पोषण आहार कार्यक्रम सबसे अहम् स्थान रखता है किन्तु इसी हिस्से को सबसे ज्यादा नजरअंदाज भी किया गया है। विष्लेषण करने पर हम पाते है। कि अब तक 6 वर्ष तक की उम्र के बच्चों को एक सामान्य वर्ग के रूप में ही देखा गया है जबकि वास्तव में छह माह से दो वर्ष तक के बच्चों के लिये ज्यादा सघन और संवेदनषील कार्ययोजना बनाये जाने की जरूरत थी। शुरू के छह माह तक तो एक हद तक बच्चे पोषण सम्बन्धी जरूरतें मां के दूध से पूर्ण होती है। अतः उस स्थिति में स्तनपान कराने वाली महिलाओं के पोषण पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिये। परन्तु ऐसा नहीं हुआ और यही कारण है कि प्रदेष में षिषु मृत्यु दर में उल्लखनीय कमी नहीं आई। इसके बाद छह माह से दो वर्ष की आयु में जब शरीर और मस्तिष्क (दिमाग) के सबसे अहम् हिस्सों का सबसे तेज विकास होता है तब सूक्ष्म पोषणीय तत्वों (डपबतव. छनजतपंदजद्ध की जरूरत पर ध्यान नहीं दिया गया। इस वर्ग के बच्चों को भी सामान्य (पचाने में कठिन) पोषण आहार ही उपलब्ध कराया जाता रहा है जिससे बच्चों पर प्रयास का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है।

वहीं आगे चलते हुये हमें यह देखना जरूरी है कि 2 वर्ष से 6 वर्ष तक के बच्चों के प्रति समाज और परिवार को सचेत रहने की जरूरत होती है किन्तु आईसीडीएस के अन्तर्गत परिवार की पोषण सम्बन्धी षिक्षा एक बहुत ही औपचारिक हिस्सा बनकर रह गई। जमीनी विष्लेषण यह सिद्ध करते हैं कि आंगनबाड़ी कार्यकर्ता की क्षमतावृद्धि के लिये होने वाले प्रषिक्षण कार्यक्रमों की उपेक्षा की गई है। इसी कारण हितग्राहियों के घर–घर जाकर होने वोला पोषण और स्वास्थ्य सम्बन्धी संवाद ठीक ढंग से नहीं हो रहा है।

मध्यप्रदेष में पोषण के अधिकार और एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम के संदर्भ में हुये संघर्ष की सीख से पता चलता है कि आंगनबाड़ी कार्यकर्ता राज्य सरकार के भीषण दबाव में काम कर रही है। अब चूंकि कुपोषण को भुखमरी का एक रूप माना जाने लगा है इसलिये अफसरषाही और मध्यमस्तर पर कार्य कर रहे अधिकारी आंगनबाड़ी कार्यकर्ता पर कुपोषित बच्चों के नाम एवं संख्या रजिस्टर में दर्ज न करने के लिये दबाव डालने है। खासतौर पर रणनीति यह रही है कि आंगनबाड़ी कार्यकर्ता को तीसरे एवं चौथे ग्रेड के कुपोषित बच्चों की जानकारी अधिकृत रूप से दर्ज न करने दिया जाये। सरकार की मान्यता है कि पहले और दूसरे दर्जे का कुपोषण बहुत गंभीर मुद्दा नहीं है। यही कारण है कि वास्तविकता में अब पहले और दूसरे ग्रेड के बच्चे भी तीसरे–चौथे ग्रेड के कुपोषण में प्रवेष कर रहे हैं।

योजना तक बच्चों की पहुंच –

अब तक सामान्य इलाकों में एक हजार की जनसंख पर और आदिवासी इलाकों में 700 की जनसंख पर और आंगनबाड़ी की स्थापना का प्रावधान सरकार के स्तर पर रहा है। किन्तु अब आंगनबाड़ी की स्थापनरा के मानकों के संदर्भ में नये सुझाव आये हैं –

1. 500 से 1500 की जनसंख्या – 1 आंगनबाड़ी (सामान्य क्षेत्र)
2. 150 से 500 की जनसंख्या – 1 छोटी आंगनबाड़ी

आदिवासी इलाकों के लिये सुझाव

1. 300 से 1500 की जनसंख्या – 1 आंगनबाड़ी
2. 150 से 300 की जनसंख्या – 1 छोटी आंगनबाड़ी

शहरी इलाकों के लिये सुझाव

1. 500 से 1500 की जनसंख्या – 1 आंगनबाड़ी

सर्वोच्च न्यायालय ने इसे और ज्यादा स्पष्ट करते हुये कहा है कि हर बसाहट में आंगनबाड़ी केन्द्र की स्थापना की जाना चाहिये। इस हिसाब से मध्यप्रदेष में 1.32 लाख आंगनबाड़ियों की जरूरत होगी। आंगनबाड़ी गांव के किस हिस्सो में स्थापित हुई है, इससे भी बच्चों की पहुंच का मुद्दा जुड़ा हुआ है। छतरपुर के जटाषंकर बड़ागांव में आंगनबाड़ी तो है परन्तु उच्च जाति बहुल इलाके में है जहां दलित बच्चों का प्रवेष संभव नहीं हो पाता है। यह सुनिष्चित करना होगा कि सामाजिक व्यवस्था में भी बदलाव का दायित्व हाथ में लिया जाये।

पोषण आहार की गुणवत्ता –

प्रयास कुपोषण की समाप्ति के लिये हो रहे हैं किन्तु यदि पोषण आहार में ही यदि कीटाणु और फफूंद हो तो स्थिति क्या होगी; यह कल्पना आसानी से की जा सकती है। मध्यप्रदेष के खण्डवा जिले में 175 आंगनबाड़ियों में फफूंद युक्त दलिया वितरित किया गया। इसी तरह चूंकि 75 फीसदी आंगनबाड़ियाँ चूंकि कच्चे मकानों में स्थापित है इसलिये वहां स्टोर किये गये पोषण आहार की गुणवत्ता को बनाये रख पाना अत्यंत कठिन विषय है। ऐसी स्थिति में यह सुनिष्चित किया जाना चाहिये कि हर आंगनबाड़ी का पक्का भव हो और पोषण आहार के भण्डारण की उपयुक्त व्यवस्था की जा सके। साथ ही मध्यप्रदेष में महालेखाकार ने भी अपनी रिपोर्ट में पोषण आहार की पौष्टिकता पर सवाल खड़े किये यह रिपोर्ट बताती है कि पोषण आहार में जिस अनुपात में मूंगदाल, गुड़ और नमक का उपयोग होना चाहिये उतनी मात्रा में इन सामग्रियों का उपयोग पोषण आहार में नहीं हुआ है। इसका मतलब है कि बच्चों को निर्धारित मात्रा में कैलोरी, प्रोटीन, वसा और कार्बोहाईड्रेट नहीं मिल रहे हैं। यह स्थिति स्पष्ट रूप से आई सी डीएस कार्यक्रम के असफल होने के संकेत है।

सहभागिता का अभाव –

समुदाय के लिये संचालित की जा रही इस योजना में पंचायतों और समुदाय की भूमिका व्यावहारिक रूप से किसी भी स्तर पर सुनिष्चित नहीं की गई है। आष्चर्यजनक है कि पंचायतों की भूमिका इस कार्यक्रम के संदर्भ में नगण्य है इसलिये आंगनबाड़ी के बंद होने पर भी वह कोई कार्रवाई नहीं कर पाते हैं। इसके बाद पंचायतों ने अपने अनुभव में यही पाया है कि चूंकि कहीं सरकार नकी भी प्रतिबद्धता नहीं है इसलिये वे भी इस योजना से बहुत आषायें नहीं रखते हैं। वे देखते रहे हैं कि ज्यादातर दिन पोषण आहार ही नहीं आता है, गलत तरीके से वनज लिया जाता है, स्वास्थ्य जांच बेहद आनियमित तरीके से होती है; तो ऐसे में ज्यादा माथा–पच्ची करने का कोई मतलब नहीं है।

आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं पर बोझ –

समुदाय कार्यकर्ता स्थानीय और वंचित समुदाय से चुनने की कोषिष की जाती है। चूंकि उनका काम सामाजिक–मनोविज्ञान से ज्यादा जुड़ा हुआ है फिर भी उनके प्रषिक्षण और क्षमतावृद्धि कार्यक्रमों पर से सरकार का ध्यान कम होता जा रहा है। उसके मानदेय के भुगतान में अनियमितता होती है। आंगनबाड़ी कार्यकर्ता जदातर अवसरों पर विभाग की ऊपरी संरचना (विभाग का संचालनालय और राज्य सरकार) के नीतिगत निर्णयों से प्रभावित होती है, भ्रष्टाचार का प्रभाव उसके यहां पोषण आहार की आपूर्ति पर सीधा पड़ता है परन्तु समुदाय के गुस्सें का सामाना भी आंगनबाड़ी कार्यकर्ता को ही करना पड़ता है।

इसके अलावा उसे मात्र 1000 रूपये का मानदेय दिया जाता है जरूरत इस बात की है कि उसका नियमितिकरण करके सम्मान जनक मानदेय की व्यवस्था की की जाना चाहिये। काम की सघनता और संवेदनषीलता को देखते हुये छह माह से तीन वर्ष तक के बच्चों और तीन वर्ष से छह वर्ष तक के बच्चों की देखभाल के लिये कम से कम दो आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं की व्यवस्था की जाना चाहिये। आमतोर पर एक आंगनबाड़ी में 80 से 100 बच्चे पंजीकृत किये जाते है; क्या यह संभव है कि इतने छोटे बच्चों को इतनी संख में एक आंगनबाड़ी कार्यकर्ता संभाल सकती है। यदि नहीं तो फिर इस कार्यक्रम के कोई मायने नहीं है क्योंकि हमारे यहां यही होता है।

वैष्वीकरण के समर्थक नीति निर्माताओं को यह जान लेना होगा

कि कुपोषण से मुक्ति के लिये किया गया व्यय कोई रियायत **(Subsidy)** नहीं

बल्कि बेहतर विकास के लिये किया गया निवेष है।

डब्ल्यू. टी. ओ. के बारे में

(Trsnslated from Looking through the Glass Darkly)

WTO के टर्म्स और संदर्भों की श्री सुशोवन धर द्वारा संकलित सूची

Agreement on Agriculture (AOA)

GATT के तत्वावधान में हुई वार्ता के अनुसार यह 1955 में लागू हो गया था। इसमें कृषि को व्यापार के ढांचे में लाया गया और उसे एक व्यापार योग्य माना गया। मकसद है कृषि में व्यापार सुधारना और नीतियों को ज्यादा बाजारोन्मुख बनाना। यह समझौता, विभिन्न देशों के बीच जो सामाजिक, सांस्कृतिक और व्यापार संबंधी फर्क है, उसे नजरअन्दाज करता है। विकासशील देशों के छोटे और किसी प्रकार गुजर बसर करने वाले किसान इस अनुचित प्रतियोगिता का सामना करने में नाकामयाब रहे हैं और उनकी आमदनी कम हुई है (गिरी कीमतों और उत्पादन की ऊँची लागत से), विस्थापन और भूमि का नुकसान हुआ है (concentration और ऋणग्रस्तता आदि के कारण), और कृषि के क्षेत्र में रोजगार की भारी कमी का सामना करना पड़ा है जिसके चलते किसानों को आत्महत्या करना पड़ी।

Agreement on Subsidies and Countervailing Measures (SCM Agreement)

यह यूराग्वे राउण्ड समझौता है जो उन नियमों को तय करता है जिनके अन्तर्गत WTO सदस्य घरू उत्पादों के लिये सबसिडी उपलब्ध करा सकते हैं या लागू करते हैं या सबसिडी पाने वाले आयातित उत्पादों पर वैसे ही नियम लागू कर सकते हैं।

Asian Development Bank (ADB)

एक बहुपक्षीय विकास वित्त संस्थान जो कि एशिया–पेसिफिक में गरीबी कम करने के प्रति समर्पित है। यह 31 सदस्यों (अब 64) द्वारा 1966 में स्थापित किया गया था। ।क्ठ अपने विकासशील सदस्यों को विकास के लिये कर्ज और एक्विटी निवेश मुहय्या कराता है। लेकिन, विशाल वेस्ट वाटर परियोजनाओं, पानी बिजली योजनाओं, सुपर हाईवेज़ और गहन खेती के जरिये विकास को बढ़ावा देकर ऐसी परियोजनाओं को धन देता है जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचाती हैं और अपने खुद के विकास के लिये निर्णय करने में भागीदारी करने का लोगों का जो अधिकार है उसका हनन करती हैं।

Anti-dumping Measures

यह एक सरकारी कार्यवाही है जिसका उद्देश्य WTO के सदस्यों के इलाके में आयातित माल पटके जाने से रोकना और उसका निदान करना है।

B

Bank for International Settlements (BIS)

स्विटजरलैंड के बेसल में स्थित यह केन्द्रीय बैंकों का एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन है जो द हेग समझौते के अन्तर्गत 1930 में स्थापित हुआ था। बाद में ब्रेटन वुड्स कान्फरेन्स में इसमें IMF और WB शामिल हुए थे। BIS सदस्य केन्द्रीय बैंकों के बीच जो रिजर्व नीति है उसे प्रभावित करना चाहता है। लेकिन, BIS के उद्देश्यों के बारे में कुछ सन्देह है कि उसका कार्यक्रम क्या है, वह कितना प्रभावी है। यह भी सवाल है कि किसी मौजूदा संस्था को लेखा सुधार में अगुआई करने

की क्या जरूरत है, खासकर इस बात के प्रकाश में कि अमेरिका में उवदमल.संनदकमतपदह कानून लागू करने में भारी असफलता और समझदारी और पर्यवेक्षण में गंभीर उल्लंघन मिला है।

Biodiversity
यह जीवन की विविधता है और इसके हिस्से हैंः विभिन्न पौधे, जानवर और माइक्रो आर्गनिज्म, उनकी अनुवांशिकी और पारिस्थिति की। इसे अकसर पारिस्थिति की प्रणालियों के मोटे पैमाने के जरिये जीवन के सभी रूपों की विविधता के रूप में परिभाषित किया जाता है– हमदमे से लेकर`चमबपमे तक। "Biodiversity" dks "Biological diversity" के विरोध के रूप में 1985 में गढ़ा गया था, लेकिन अब यह नया शब्द अर्थवान और महत्वपूर्ण हो गया है।

Bound Tariffs
इनका संबंध उन टेरिफ (शुल्क) से है जिनका उल्लेख्k WTO के सदस्यों की रियायतों की सूची में किया गया है। इस सूची में टेरिफ के उस उच्चतम स्तर का जिक्र है जो वे WTO की शर्तों के पालन में आयातित उत्पादों पर लगा सकती हैं।

Bretton Woods
यह अमेरिका के न्यू हैम्पशायर का एक कस्बा है जहां दूसरे विश्व युद्ध के मित्रों ने 1944 में तय किया था कि वे युद्ध के बाद की दुनिया की आर्थिक व्यवस्था को सुधारेंगे। इस नाम का इस्तेमाल उस व्यवस्था का वर्णन करने के लिये किया जाता है ; खासकर उन दो संगठनों के लिये जो वहां कायम किये गये थे– IMF और WB, जो मुक्त व्यापार की प्रणाली के भीतर विनिमय दर की स्थिरता को बढ़ावा देने और आर्थिक विकास के लिये बनाये गये थे।

C

Conditionality
यह देशों को कर्ज में या संकट में उधार देने के संबंध में IMF की एक खासियत है। इसमें धन प्राप्त करने के लिये नीति संबंधी बदलाव या ढांचागत सुधार करना पड़ता है।

Countervailing Measure (CVM)
इसे ''काउन्टरवेलिंग ड्यूटी'' भी कहा जाता है। इसका मतलब है एक विशेष चुंगी या कर, जो आयात करने वाले देश द्वारा किसी उत्पाद पर इसलिये लगाया जाता है कि जिससे उस उत्पाद के निर्माण के लिये निर्यातक देश द्वारा दी जा रही सबसिडी को प्रभावहीन किया जा सके।

Convention on Biological Diversity (CBD)
जैव विविधता पर संयुक्त राष्ट्र संध के कनवेन्शन (1992 में अपनाया गया) का उद्देश्य है संसाधनों के टिकाऊ उपयोग और अनुवांशिकी संसाधनों से हासिल होने वाले फायदों के न्यायपूर्ण और समान उपयोग और संरक्षण को बढ़ावा देना। ब्ठक एक बहुपक्षीय पर्यावरणीय समझौतों में से एक है, जिसके नियमों को व्यापार में मानना अनिवार्य है।

Core Labour Standards - ILO
इनका मतलब है वे अधिकार जो अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) के आठ मुख्य कन्वेन्शनों में दिये गये हैं। इनमें संगठन बनाने की आजादी, समानता, बाल श्रम की समाप्ति और बलात श्रम की समाप्ति आते हैं। ILO की गवर्निंग बॉडी ने इन आठ कन्वेन्शनों को कामगारों के ऐसे बुनियादी अधिकार माना है जिनका सम्मान ILO के हर सदस्य राज्य को करना चाहिये।

D

Debt Crisis
1980 के दशक में विकासशील देश सेवा संबंधी ऋण चुकाने में व्यापक रूप से असमर्थ हो गये थे और उसके परिणाम स्वरूप तेल की बढ़ती कीमतों, ऊंची ब्याज दर, उधार में कमी और घटते निर्यात के कारण घरू विकास में परेशानी पैदा हो गयी थी तथा कर्ज का कुल भार 1986 में 1 ट्रिलियन डालर हो गया था।

Doha Declaration
˘TO के समझौतों को लागू करने हेतु विकासशील देशों की सहायता करने के लिये WTO ने दोहा, कतार में 2001 में चौथी मंत्रिस्तरीय कान्फरेन्स में इस घोषणा को अपनाया था। इसमें कृषि, सेवाओं, औद्योगिक टेरिफ, निवेश, व्यापार और प्रतियोगिता नीति से संबंधित मुद्दे आते हैं।

Dumping
डम्पिंग उसे कहते है जब कोई उत्पाद उस कीमत से कम पर निर्यात किया जाता है जो कीमत निर्यात करने वाले देश के भीतर होती। इसमें कृषि संबंधी उत्पादों को विकासशील देशों के स्थानीय बाजारों में उत्पादन लागत से भी कम कीमत में बेचा जाता है।

Domestic Support
किसी देश की सरकार द्वारा किसानों को दी जाने वाली सहायता/सबसिडी, जिन्हें तीन 'बॉक्स' (अम्बर, ग्रीन और ब्लू) में वर्गीकृत किया जाता है। ये वर्ग इस बात के आधार पर बनाये गये है कि ये व्यापार पर कितना विकृत असर डालेंगे। अम्बर बॉक्स में वह सहायता आती है जिसके बारे में यह माना जाता है कि यह उस व्यापार और उत्पादन पर असर डालेगी जिसे कम किया जाना चाहिये, ताकि उन्हें अन्ततः खत्म किया जा सके। ग्रीन बॉक्स सहायता ज्यादातर धनी देशों के द्वारा इस्तेमाल की जाती है और ऐसा समझा जाता है कि "non-trade distorting" असर नहीं या बहुत कम होगा और इसे अनुमति दी जा सकती है। ब्लू बाक्स सहायता कटौतियों से मुक्त रहती है और सामान्यतः इसमें उत्पादन को सीमित करने वाला मुआवजा शामिल रहता है।

Dunkel Draft
उन नियमों का स्रंग्रह जो WTO के काम को दिशा देते हैं और बहुपक्षीय व्यापार प्रणाली का आधार बनाते हैं। इसके सबसे विवादास्पद हिस्सा पेटेन्ट से संबंधित है, जिसे TRIPS कहा जाता है।

E

Eco-labelling
यह पेकेजिंग या लेबलिंग की जरूरतों से संबधित है जो किसी खास उत्पाद का पर्यावरणीय मूल, प्रदर्शन, या विशेषताओं का संकेत देता है और जो मुख्यतः TBT से नियंत्रित होता है। खाद्य सुरक्षा से सीधे रूप से संबंधित पेकेजिंग और लेबलिंग जरूरतों को SPS माना जाता है।

Export-processing Zones
इसे मुक्त व्यापार क्षेत्र भी कहते हैं। देशों को औद्योगीकृत करने में वे चुनिन्दा क्षेत्र जिसकी विशेषता है, विदेशों से सीधे निवेश और वृद्धि को आकर्षित करने के लिये कम कर और टेरिफ, सबसिडी प्राप्त बुनियादी ढांचा और कुछ नियमों खासकर श्रम कानूनों से छूट।

Export Subsidies
ये वे भुगतान हैं जो कृषि उत्पादकों को अपने उत्पाद विदेशों को निर्यात करने के लिये सबसिडी देते हैं। उरुग्वे राउण्ड नियमों के अनुसार ये 1986–88 के औसत से विकसित देशों के लिये 6 सालों में 36 फीसदी और विकासशील देशों

के लिये 10 साल में 24 फीसदी कम कर दिये गये थे।

F

Foreign Direct Investment (FDI)

लम्बी अवधि के लिये जुड़ने की दृष्टि से विदेश से आने वाला निवेश (अर्थात पूंजी)। यह उस अनुमानित निवेश से भिन्न है जिसमें विदेशी पूंजी मेजबान देश में मौजूदा घरू कंपनियों के स्टाक या एक्विटी में निवेशित की जाती है।

G

G-7

सात बड़ी आर्थिक ताकतों (अमेरिका, जापान, जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन, इटली, कनाडा) का समूह जो वित्तीय स्थायित्व और आर्थिक वृद्धि पर नियमित रूप से परामर्श करता रहता है। (रूस के प्रति सम्मान प्रकट करते हुए इसे कभी कभी जी–8 कहा जाता है।)

G-20

21 विकासशील देशों का समूह (मिस्र, नाइजीरिया, दक्षिण आफ्रिका, तन्जानिया, जिम्बाबवे, चीन, भारत, इन्डोनेशिया, पाकिस्तान, फिलिप्पाइन्स और थाइलेण्ड, अर्जेनटिना, बोलिविया, ब्राजील, चिली, क्यूबा, ग्वाटेमाला, मेक्सिको, पेराग्वे, उरुग्वे और वेनेजुएला) जो कानकुन में 10 से 14 सितम्बर 2003 में WTO की पांचवीं मंत्रिस्तरीय कान्फरेन्स के लिये हो रही तैयारियों के अन्तिम चरणों में 20 अगस्त 2003 में स्थापित किया गया था। इसका फोकस है कृषि जो दोहा विकास एजेण्डा का केन्द्रीय मुद्दा था।

G-33

44 विकासशील देशों की मैत्री जिसमें ये देश मिलकर इस गारण्टी की कोशिश कर रहे हैं कि विकासशील देशों की खाद्य सुरक्षा, आजीविका सुरक्षा और ग्रामीण विकास के सरोकारों को कृषि पर हो रही WTO की वार्ता के केन्द्र में रखा जाना चाहिये। इनमें एन्टिगुआ और बरबूडा, बरबडोस, बेलिज, बेनिन, बोत्स्वाना, चीन, कोते द एाइवरी, कांगो, क्यूबा, डोमिनिकन गणतंत्र, अल सल्वाडोर, ग्रेनेडा, ग्वाटेमाला, गुयाना, हैती, हान्ड्यूरास, भारत, इन्डोनेशिया, जमैका, केन्या, कोरिया, मडागास्कर, मारीशस, मंगोलिया, पाकिस्तान, पनामा, फिलिप्पाइन्स, पेरू, केन्टकिट्स, सेन्ट लूसिया, सेन्ट विन्सेन्ट और ग्रेनेडाइन्स, सेनेगल, श्रीलंका, सूरीनाम, तन्जानिया, ट्रिनीडाड, वेनेजुएला, जाम्बिया और जिम्बाबवे। इन्डोनेशियाजी–33 का समन्वय करता है और यह समूह SPS और SSM की अवधारणाओं को लेकर आगे बढ़ रहा है ताकि उनका इस्तेमाल कृषि वार्ता के नतीजों के हिस्सों के रूप में किया जा सके।

G-77

यह समूह 15 जून 1964 को 77 विकासशील देशों के द्वारा जिनेवा में हो रहे UNCTAD के पहले सम्मेलन में स्थापित किया गया था। 1967 में समूह 77 की पहली मंत्रिस्तरीय बैठक ने अलजियर्स में 1967 में चार्टर आफ एलजियर्स अपनाया। हालांकि जी 77 की सदस्यता 132 देशों तक हो गयी है, लेकिन ऐतिहासिक महत्व के कारण उसका मूल नाम वही बनाये रखा गया। जी 77 विकासशील देशों को अपने सामूहिक आर्थिक हितों को समझने और उन्हें बढ़ावा देने और वार्ता करने की अपनी संयुक्त क्षमता को बढ़ावा देने के लिये माध्यम प्रदान करता है।

G-90

सबसे गरीब और सबसे छोटे देश हाल ही में 90 के समूह के रूप में उभरे हैं, जो विश्व व्यापार संगठन में काम करता है। यह सबसे कम विकसित देशों और अफ्रीकी, कैरीबियन और पेसिफिक ;।ब्ब समूह के देशों की एक छतरी है। यह WTO में सदस्यों का सबसे बड़ा समूह है।

General Agreement on Trade in Services (GATS)

एक अन्तराष्ट्रीय व्यापार समझौता जो 1995 में प्रभावी हुआ और WTO की छतरी के नीचे काम करता है। इसमें कई

प्रकार की सेवाएं आती हैं, जैसे बैंकिंग, शिक्षा, स्वाथ्य की देखभाल, कचरा एकत्र करना, पर्यटन या परिवहन। इसका मकसद है सेवाओं में से व्यापार की सभी बाधाएं क्रमशः हटा दी जायें समझौता इस बात की राह देख रहा है कि बुनियादी सेवाओं को, जैसे स्वास्थ्य की देखभाल, शिक्षा, पानी और परिवहन, को इस दृष्टि से निजीकरण किया जाये कि इन सेवाओं को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता के लिये इन सेवाओं को खोल दिया जाये, और विशाल, मुनाफे के लिये, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिये खोल दिया जाये।

General Council

वह निकाय जो मंत्रिस्तरीय सम्मेलनों के बीच के दो साल के अन्तराल के दौरान WTO को चलाता है। इसमें सभी सदस्य सरकारों से प्रतिनिधि (अकसर राजदूत या उनके समकक्ष) होते हैं और उसे मंत्रिस्तरीय सम्मेलन की ओर से काम करने का अधिकार होता है और उसकी सर्वजनिक जांच हो सकती है। इसके मौजूदा अध्यक्ष हैं महामहिम सुश्री अमीना चवाहिर मोहम्मद (केन्या) हैं।

Genetically Modified Organism (GMO)

यह ऐसा वतहंदपेउ होता है जिसके अनुवंशिकी पदार्थ को "recombinant DNA technology" तकनीक के जरिये बदल दिया गया है। पहला GMO 1973 में स्टेनले कोहन और हर्बर्ट बोयर के द्वारा निर्मित किया गया था। सभी नयी तकनालाजियों के समान, इनमें कुछ ज्ञात और अज्ञात जोखिम तो होते ही हैं, और GM खा़द्य और फसलों से जुड़े विवाद सधारणतः मानव और पर्यावरण की सुरक्षा, लेबल लगाने (labelling) और उपभोक्ता की पसन्द, बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों, नैतिकता, खा़द्य सुरक्षा, गरीबी कम करने और पर्यावरण संरक्षण पर फोकस करते हैं,

Geographical Indicators (GI)

यह किसी खास भौगोलिक क्षेत्र में या स्थानीय रूप से पैदा की जाने वाली चीजों के उत्पादकों को उत्पाद की ज्यादा कीमत लेने का मौका देता है क्योंकि भूमि, जलवायु की ऊंची गुणवत्ता के कारण या उस स्थान में होने से अन्य विशेषताओं के कारण ऐसा हुआ है। ज्त्प्ै के अन्तर्गत ळड सुरक्षा का एक बुनियादी मानक सभी उत्पादों के लिये प्रदान किया गया हे और निर्यात की जाने वाली मदिराओं के लिये कुछ ऊंचे मानक हैं।

Globalisation

बुनियादी रूप से यह एक आर्थिक घटना है, जिसमें अन्तराष्ट्रीय व्यापार, निवेश और पूंजी के बहाव में वृद्धि के जरिये राष्ट्रीय आर्थिक प्रणालियों का ज्यादा विनिमय या एकीकरण होता है– एक ऐसा एकीकरण जो विश्व के स्तर पर बाजार और मुक्त व्यापार के नियम के आधार पर होता है। आलोचक इस शब्द की परिभाषा में कहते हैं कि यह ऐसी आर्थिक व्यवस्था की ओर एक विश्वव्यापी अभियान है जिस पर ऐसा दानवीय कारपोरेट व्यापार और बैंकिग संस्थाएॅ हावी रहते हैं, जो प्रजातंत्रीय प्रक्रियाओं या राष्ट्रीय सरकारों के प्रति जवाबदेह नहीं रहते। जैसा कि नीचे से अनुभव किया जाता है, वैश्वीकरण के मुख्य रूप का मतलब है एक ऐतिहासिक बदलाव : अर्थव्यवस्था मे बदलाव, आजीविका और जीने के तरीकों में बदलाव, राजनीति में बदलाव, स्थानीय रूप से अभी तक नियंत्रित हो रही चीजों पर नियंत्रण की समाप्ति।

Green Room

WTO के थोड़े से सदस्यों के बीच अनौपचारिक परामर्श की प्रक्रिया, जो अपारदर्शी और अप्रजातांत्रिक है। GATT के दिनों में डायरेक्टर जनरल व्यापार की कुछ खास ताकतों को अपने कार्यालय में हरे रंग से रंगे हुए पास के कमरे में या किसी भी कमरे में जिसकी टेबिल पर हरे रंग का ऊनी आवरण हो, आमंत्रित करता है। ग्रीन रूप में हुआ समझौता ज्यादा सदस्यो को प्रस्तुत करना जरूरी है। बोलचाल की भाषा में ग्रीन रूप pejorative term बन गया है जो व्यापार वार्ता की ऐसी प्रक्रिया को प्रकट करता है जो exclusionary है और जिसमें पारदर्शिता नहीं है।

I

Intergovernmental Organisation (IGO)

राज्यों द्वारा निर्मित और सदस्यता राज्यों तक सीमित। उदाहरण : संयुक्त राष्ट्र संघ, NATO

International Monetary Fund (IMF)

यह 184 देशों का संगठन है जो दुनिया के मुद्रा संबंधी सहयोग का पोषण करने, वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को आसान बनाने, सघन रोजगार को बढ़ावा देने और टिकाऊ आर्थिक वृद्धि और गरीबी कम करने के लिये काम कर रहा है। आलोचकों का दावा है कि IMF के नीति निर्माता अमेरिकी और यूरोपीय निगमों के मित्र पूंजीवादी सैनिक तानाशाही को जानबूझकर सहयोग देते हैं। वे यह भी दावा करते हैं कि IMF अकसर प्रजातंत्र, मानव अधिकार और श्रम अधिकारों के बारे में उनके दृष्टिकोणों का विरोधी या दुश्मन है। अन्यों का दावा है कि राजसत्तावादी राज्यों को प्रजातांत्रिक बनाने के लिये के IMF पास बहुत कम शक्ति है, और उसका घोषित उद्देश्य भी वित्तीय स्थायित्व की सलाह देना और उसे बढ़ावा देने का नहीं है।

International Non-governmetal Organisation (INGO)

सदस्य व्यक्ति, कंपनियां या संघ हो सकते हैं। जैसेः Amnesity International, Red Cross, International Olympic Committee, International Organisation for Standardisation.

J

Japan's Official Development Assistance Programme (JODA)

जब जापान कोलम्बो प्लान में शामिल हुआ था, तब विकासशील देशें को आर्थिक सहायता उपलब्ध करानें के लिये 5 अक्टूबर 1954 को जापान के विदेश मंत्रालय के द्वारा स्थापित कार्यक्रम। शुरूआत में JODA कार्यक्रम ने उन एशियाई देशों की क्षतिपूर्ति के काम को भी देखा था जिन्हें दूसरे महायुद्ध में जापान ने अधिकृत कर लिया था, जैसे बर्मा और फिलिप्पाइन्स। IMF के विकास के दौरान उसके दर्शनों और उद्देश्यों को फिर से परिभाषित करने के लिये एक आन्दोलन उभरा क्योंकि इसके आलोचक इस पर दोषारोपण करते हैं कि यह टिकाऊ विकास में बाधा पैदा कर रहा है।

July Framework Agreement

कानकुन मंत्रिस्तरीय सम्मलेन बिना किसी निर्णय के खत्म होने के बाद यह समझौता जुलाई 2004 में WTO में हुआ था। इसे यह देखना था कि व्यापार वार्ता के दोहा विकास चक्र को कैसे आगे बढ़ाया जाये। गरीब देशों के लिये कुछ छोटे–मोटे फायदे हैं और सब मिलाकर जुलाई फ्रेमवर्क एक ऐसा न्यूनतम समझौता है जो वार्ताओं और WTO को जीवित तो रखता है, लेकिन विकसित और अविकसित देशों के बीच जो तीखे मतभेद हैं उन्हें पाटने में नाकामयाब रहा है, विकासोन्मुख नतीजों की गारण्टी की तो बात ही दूर है। विकासशील देशों के लिये दो सकारात्मक नतीजे हैं, कृषि निर्यात सबसिडी पर ताकतवर भाषा और चार में से तीन तथाकथित सिंगापुर मुद्दों को त्यागने का समझौता। लेकिन, ये NAMA पर किये गये उस गलत सौदे से बेकार हो गये, जो धनी देशों को कृषि संबंधी कुछ भुगतानों को फिर से परिभाषित करने की अनुमति देता है जो कि नियमों के अन्तर्गत स्वीकार्य हैं।

L

Least-Developed Countries (LDCs)

वे देश जिनकी प्रति व्यक्ति GDP 1000 हजार डालर से कम है। ये सबसे कम विकसित देश और LMG सामान्यतः खाद्य सुरक्षा या विकास बॉक्स का समर्थन करते हैं।

M

Market Access

आयातों, पर से QR और NTB के स्थान पर टेरिफ लगाने– एक प्रक्रिया जिसे ''टेरिफिकेशन'' कहा जाता है– के लिये

AOA पर हस्ताक्षर करने वाले सदस्यों के को इसकी जरूरत होती है। तब ये टेरिफ कुछ समय की अवधि में उतने कम कर दिये जायेंगे जितने प्रतिशत की सहमति बनी हो। उरुग्वे राउण्ड में, ये विकासशील देशों के लिये 6 साल में (1995–2000) के दौरान 36 फीसदी कम कर दिये गये थे और विकसित देशों के लिये 10 साल की अवधि में (1995–2004) 24 फीसदी कम करने के लिये। लेकिन LDCs को न तो अपने टेरिफ कम करना होता है और न उन्हें बढ़ाना होता हैं

Ministerial Conference

यह WTO का सर्वोच्च निर्णय लेने वाला निकाय है, जो हर साल दो बार मिलता है और संगठन के लिये राजनीतिक दिशा प्रदान करता है। इसका छठवां सम्मेलन 13–18 दिसम्बर 2005 के बहांगकांग, चीन में हुआ।

Mini-ministerial

यह वह बैठक है जिसे कोई WTO सदस्य अपने इलाके में आमंत्रित करता है और जिसमें WTO के डायरेटर जनरल के अलावा 24 के लगभग WTO सदस्यों (ज्यादातर अन्य बड़े विकसित देश, बड़े विकासशील देश और छोटे विकासशील देश जो विकासशील देशों के मुख्य समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं) के व्यापार मंत्री शामिल होते हैं। इन बैठकों में, उन क्षेत्रों में हुए समझौतों पर फोकस करने या उन्हें बाहर करने कोशिश की जाती है, जिनमें ग्रीन रूम प्रक्रिया प्रदर्शित करने वाले उनके जिनेवा स्थित प्रतिनिधियों के द्वारा सर्वसम्मति नहीं बन पायी।

N

Non-Agricultural Market Access (NAMA)

बहुत से क्षेत्रों में सामान्य उदारता। टेरिफ और गैर टेरिफ बाधाएं हटाने और अन्त में खत्म करने और पर्यावरणीय चीजों का उदारीकरण। यह उस नव उदार रूढ़िवादिता पर आधारित है कि मुक्त व्यापार खुद–ब –खुद सभी देशों को बराबरी से फायदा पहुंचाता है। NAMA वार्ता अन्य बातों के साथ WTO सदस्य देशों मे कई प्रकार के औद्योगिक उत्पादों पर टेरिफ कम करना चाहता है। विकासशील देशों के लिये इन कटोतियों ंकठोर हैं और वित्तीय, मौद्रिक और आर्थिक से लेकर सामाजिक तक हैं।

Negative List Approach

उन चीजों की सूची जिन पर GATTS लागू नहीं होगा।

Neoliberalism

यह बीसवीं सदी के अन्त का सिद्धान्त है जिसमें माना जाता है कि राज्य के सीमित नियमों के साथ बाजार में प्रतियोगिता होने से वृद्धि (Growth) का अच्छा पोषण होता है। प्रतियोगी वैश्विक बाजारों में मुक्त उद्यम की पैरवी और टेरिफ तथा नियमों के भार से मुक्त माल और पूंजी का आवागमन। यह मुक्त बाजार और सरकार के छोटी भूमिका की मांग करता है। यह कहता है कि सरकारी नीतियां और नियम –धनवानों पर कर लेना भी इसमें शामिल है– ऐसे हालात पैदा करता है जो आर्थिक वृद्धि को धीमा करते हैं। यह कामगारों और परिवारों के लिये सुरक्षा कम करने की मांग करता है। अस्पतालों, पानी, परिवहन और शिक्षा का निजी स्वामित्व। कल्याण, आवास और रोजगार विकास में सरकारी खर्च में भारी कटौती और कामगारों और संघों के लिये कोई आवाज नहीं और दावा करता है कि इस तरीके से आर्थिक वृद्धि होगी और सभी समृद्ध होंगे और इसकी नजर में गरीबी सरकारी हस्तक्षेप और गरीब परिवारों में प्रेरणा की कमी का परिणाम है, जिससे ज्यादातर लोगो का जीना कठिन हो जाता है।

Non-tariff Barrriers (NTBs)

ये वे कदम हैं जिनका असर चीजों या सेवाओं के व्यापार पर व्यापार–बंधनकारी (trade-restrictive) प्रभाव होते हैं, लेकिन जिनमें टेरिफ नहीं लगती। इनमें व्यापार और तादात्मक बंधनों पर तकनीकी बाधाएं आती हैं। इनमें वे मानददण्ड आते हैं जिनका मकसद स्वास्थ्य को बढ़ावा देना और पर्यावरण की रक्षा करना है।

O

Organisation for Economic Co-operation and Development (OECD)
इसका मुख्यालय पेरिस में शेतो द ला मूत में है। यह विकसित देशों का एक ऐसा संगठन है जो प्रतिनिधि प्रजातत्र के सिद्धातों को और मुक्त व्यापार वाली अर्थ व्यवस्था को मानता है। इसका जन्म दूसरे महायुंद्ध के बाद यूरोप के पुनर्निमाण के लिये मार्शल प्लान के संचालन में सहायता के लिये 1948 में Organisation for European Economic Co-operation (OEEC) के रूप में हुआ था। बाद में इसकी सदस्यता गैर यूरोपीय देशों को भी दी गयी और 1961 में इसे सुधार कर Organisation for Economic Co-operation and Development बना दिया गया।

P

Patent
एकाधिकार का एक रूप जो किसी अविष्कारक को एक अवधि के लिये दिया जाता है। उस अवधि के दौरान उसे उसका उपयोग करने और उसे कियान्वित करने से होने वाले फायदे पाने का अधिकार रहता है। पेटेन्ट नवाचार के लिये प्रेरणा के रूप में मंजूर किये जाते हैं। इसके अलावा दुनिया भर मे पेटेन्ट के कानूनों पर ऐसे बन्धन रहते हैं कि पेटेन्ट के मालिक के मान्य एकाधिकार का दुरुपयोग न होने पाए। लेकिन, निर्माण क्षेत्र में प्रतियोगिता के कारण अमेरिका और अन्य विकसित देश चाहते हैं कि वे पेटेन्ट के जरिये मिलने वाले एकाधिकार को कानूनी रूप देने का साधन बनाकर दुनिया भर की अर्थव्यवस्था पर उनका प्रभुत्व हो जाये। डन्कल प्रारूप में TRIPS ड्राफ्ट ने पेटेन्ट के स्वामी की एकाधिकार की ताकत को पवित्र बनाने और उसके उत्तरदायित्वों को कम करने की कोशिश की।

Periphery
गरीब, शोषित इलाके जो ऐतिहासिक रूप से शक्तिशाली और धनी देशों के प्रभुत्व में हैं। वैश्विक–प्रणाली सिद्धान्त अवधारणा, जिसका मतलब है सैनिक रूप से कमजोर देश जो आर्थिक रूप से पूंजीवादी देशों के प्रभुत्व में हैं, जो असमान विनिमय के अन्तर्गत हैं, कच्चे माल के निर्यात तक सीमित हैं और श्रम पर आधारित उत्पादन पर आश्रित हैं।

Protectionism
टेरिफ, कोटा आदि के जरिये विदेशी प्रतियोगिता से घरू उत्पादकों की रक्षा करने की कोशिश। अब यह वैश्विक मुक्त व्यापार समझौतों के अन्तर्गत कम हो गया है। रोजगार की कमी और पर्यावरण को नुकसान रोकने के लिये व्यापार के आलोचकों में लोकप्रिय।

Q

Quad
इस शब्द का उपयोग चार व्यापारी ताकतों– अमेरिका, कनाडा, जापान और यूरोपियन यूनियन– के लिये किया जाता है, जो लम्बे समय तक ॅज्व के भीतर सबसे ज्यादा ताकतवर थें

Quantitative Restrictions (QR)
आयात या निर्यात की जा सकने वाली किसी चीज की तादाद पर किसी खास अवधि के दौरान स्पष्ट सीमाएं, या कोटा, जिसकी माप आयतन से और कभी–कभी मूल्य से की जाती हो। कोटा चुनिन्दा आधार पर भी लागू किया जा सकता है, और मूल या गन्तव्य देश के अनुसार तय की गयी विभिन्न सीमाओं के साथ तय होता है। या यह तादात्मक वैश्विक आधार पर, भी तय होता है, जो सिर्फ यह स्पष्ट करता है कि कुल सीमा क्या है। इस प्रकार इसकी प्रवृत्ति ज्यादा कुशल प्रदायकों को फायदा पहुचाने की होती है। यह घरू उद्योग और कृषि सबसिडी वाले आयातों से बचाने के लिये विकासशील देशों के लिये एक महत्वपूर्ण नीतिगत तरीका है।

R

Rio Declaration
रायो डि जेरीरो में 1992 को हुई न्छ ष्न्तजी ैनउउपजष के द्वारा विश्वव्यापी पर्यावरण सुरक्षा के लिये किये गये आव्हान का बयान।

S

Sanitary and Phytosanitary (SPS) Measures
इस पर एक समझौता कि सरकारें कैसे खाद्य सुरक्षा और पशु और वनस्पति के स्वास्थ्य के उपाय लागू कर सकती हैं जो WTO के बुनियादी नियमों में हैं। SOS सार्वजनिक स्वास्थ्य समझौता नहीं है, यह व्यापारोन्तमुख व्यापार समझौता है, जिससे कि नियम कम करने और कंपनियों के लिये अन्तर्राष्ट्रीय रूप से व्यापार करना सरल बनाने की उम्मीद की जाती है।

Singapore Issues
सिंगापुर मंत्रिस्तरीय सम्मेलन में पहचाने गये चार मुद्दे जिनपर WTO की कार्य योजना के हिस्से के रूप में चर्चा करने के लिये WTO चार अलग कार्यसमूह बनाने के लिये तैयार हो गया था। ये चार मुद्दे हैं– 1. व्यापार और निवेश के बीच रिश्ता; 2. व्यापार और प्रतियोगिता नीति के बीच रिश्ता; 3. व्यापार सहजीकरण; और 4. सरकारी उगाही में पारदर्शिता। व्यापार और निवेश के मुद्दे ऐसे नियम निर्मित करने पर फोकस करते हैं जिनके अन्तर्गत मेजबान देश के किसी भी हस्तक्षेप से निवेशकों के अधिकार सरुक्षित रहेंगे। व्यापार और प्रतियोगिता का मुद्दा मुख्यतः ऐसे नियम बनाने के विचार के बारे में है, जो चाहता है कि सरकारें विदेशी और घरू कंपनियों के बीच मुक्त प्रतियोगिता लागू करें। व्यापार आसान होने का अनिवार्यतः संबंध ऐसे नये नियम बनाने से है जिनके लिये सरकारों को सीमा की चुंगी, सौदा और प्रक्रियाएं होगा। सरकारी उगाही में पारदर्शिता के लिये सरकारों के लिये जरूरी होगा कि वे सार्वजनिक रूप से नीलामी करें, सरकारी उपकरणों की खरीद के लिये अभ्यास करें और इसलिये सरकारी ठेकों के लिये नीलामी में घरू कंपनियों से प्रतियोगिता करने में प्रभावी ढंग से विदेशी कंपनियों को अनुमति दें।

इन मुद्दों पर चर्चा का फोकस इस बात पर रहा कि WTO के ढांचे के भीतर नये समझौतों के समकक्ष होने के लिये वार्ता शुरू की जाये या नहीं। जरूरी बात यह है कि इन मुद्दों पर चर्चा का अन्तिम मकसद यह है कि WTO सदस्यों (खासकर विकासशील देशों) के बाजारों में विदेशी फर्में (खास तौर पर यूरोपीय, जापानी और अमेरिकी फर्में) बाजार तक पहुॅच कैसे बढ़ायी जाये।

Small Vulnerable Economics (SVEs)
इसका प्रवक्ता मारीशस है और ये सामान्यतः वे विकासशील देश हैं जो खाद्य के मामले में असुरक्षित हैं। वे AOA के प्रभवों के प्रति सावधान हैं और आर्थिक और रोजगार की दृष्टि से अपने कृषि के क्षेत्र को सहायता देने के महत्व पर जोर देते हैं।

Special and Differential Treatment (S&D)
इसका संबंध उस सिद्धान्त से हैं जो विकासशील देशों को WTO के दायित्वों के पालन के संदर्भ में विशेष विशेषाधिकार देगा, क्योंकि उनका आर्थिक विकास अलग किस्म का है या निचले स्तर का हैं। ये विशेषाधिकार WTO के कुछ नियमों से छूट के रूप में होते हैं या विशेष व्यापार अधिकार के रूप में होते हैं। (जैसे लम्बे समय के संक्रमण काल या व्यापार का कम उदारीकरण)

Special Safeguards (SSG)
WTO अपने सदस्य देशों को प्रभावित घरू उद्योगों को आयातों से राहत देने के लिये छूट देने की अनुमति देता है। यदि उत्पाद घरू उत्पादों की तुलना में पूरी तरह या अपेक्षाकृत ज्यादा तादाद में आयात किये जाते हैं और ऐसे हालात में घरू उद्योगों को आघात पहुंचाते हैं या आघात का संकट पैदा करते हैं तो आयात करने वाली सरकार आयातों के

खिलाफ अस्थायी (सामान्य) सुरक्षात्मक उपाय कर सकती है (ऊची टेरिफ, टेरिफ कोटा या फत)। लेकिन ॅज्ब के सभी सदस्यों (सिर्फ 38 सदस्य) की पहुंच इस व्यवस्था में नहीं थी और यह व्यवस्था सभी कृषि उत्पादों के लिये उपलब्ध थी। सुरक्षा के उपाय लागू करने का मकसद यह है कि टेरिफ में कटौती होने के कारण या बहुपक्षीय व्यापार चर्चाओं में सहमत हुए तादात्मक बन्धनों को उठाने से निर्यात में बढ़ी हुई प्रतियोगिता होती है उससे घरू उद्योग को तैयार होने और और उसके अनुकूल होने के लिये लिये समय मिल सके।

Structural Adjustment (SAP)
सरकारी खर्च कम करने की नीति जैसे, मुद्राप्रसार कम करना, आयात सीमित करना, मुद्रा का अवमूल्यन करना और आर्थिक कुशलता बढ़ाना। कर्ज का ढांचा फिर से बनाने की शर्त के रूप में IMF कर्जदार देशों से इन बातों की अपेक्षा करता है। लेकिन आर्थिक गिरावट और घटी सामाजिक सुरक्षा के लिये इसकी आलोचना की जाती है।

Sustainable development
ऐसी वृद्धि को बढ़ावा देने की नीति जो पर्यावरण की सुरक्षा आदि के अनुकूल हो, उदाहरण के लिये, पुनर्वीनीकृत हो जाने वाले संसाधनों की ओर जाना और विकास की योजनाओं में स्थानीय समुदाय की भागीदारी। विकसित और विकासशील देशों के हितों को मान्यता देते हुए अन्तर्राष्ट्रीय वार्ता में हुआ समझौता।

T

Tarification
इसका संबंध गैर टेरिफ बाधाओं को ऐसे टेरिफ में बदलने से है जो आयात किये गये उत्पादों पर उसी स्तर के व्यापार बन्धन लगायें।

Tariff Rate Quota (TRQ)
यह टेरिफ नीति का ऐसा टूल है जिसका उपयोग घरू रूप से उत्पादित माल या उत्पाद को प्रतियोगी आयातों से बचाने के लिये होता है। ज्त्फ में दो नीतियां होती हैं जिनका उपयोग ऐसे आयातों को रोकने के लिये ऐतिहासिक रूप से देशों ने किया है : TRQ में कोटा एक विशेष टेरिफ स्तर के साथ काम करता है ताकि वांछित स्तर तक आयात सुरक्षा दी जा सके।

Technical barriers to Trade (TBI)
यह एक ऐसा समझौता है जो यह सुनिश्चित करने की कोशिश करता है कि नियम, मानक, जांच और प्रमाणीकार प्रकियाएँ अनावश्यक बाधा पैदा न करें, क्योंकि तकनीकी नियम और उत्पाद मानक हर देश की अलग होती है और यदि ज्यादा विभिन नियम और मानक होते हैं तो उत्पादकों और निर्यातकों का जीवन मुश्किल हो जाता है। यह समझौता अकसर एक संरक्षणवादी औजार के रूप में काम करता है और विकासशील देशों से आने वाले आयात को रोकता है।

Trade-Related Aspects of Intellectual Property Rights (TRIPS)
उरुग्वे राउण्ड में 1986–94 में स्वीकार किये गये TRIPS पर WTO समझौते ने पहली बार बहु पक्षीय व्यापार प्रणाली में बौद्धिक सम्पदा नियम लागू किये। यह ऐसा समझौता है जो WTO के द्वारा प्रशासित किया जाता है, जो बौद्धिक सम्पदा की सुरक्षा के नयूनतम मानक तय करता है (कापीराइट, पेटेन्ट, और ट्रेडमार्क) जिन्हें सभी WTO सदस्यों को अपने देश के कानूनों में शामिल करना चाहिये। TRIPS समझौते के आलोचक कहते हैं कि यह बौद्धिक सम्पदा की सुरक्षा के बहुत ऊंचे स्तर के आदेश देता है। कुछ दलील देते हैं कि नवाचार करने वालों को सभी उत्पादों– दवाओं और बीजों में भी –एकाधिकार अधिकार देकर समझौता मानव अधिकारों के ऊपर कारपोरेट हितों को प्राथमिकता देता है, जैसे स्वास्थ्य पर अधिकार या टिकाऊ आजीविका का अधिकार। चूंकि उन्हें उनकी पेटेन्ट किये उत्पादों पर प्रतियोगिता का सामना नहीं करना पड़ता, पेटेन्ट होल्डर अकसर उत्पादों की कीमत इतनी ज्यादा रख देते हैं कि वह गरीब उपभोक्ताओं की पहुंच के बाहर हो जाता है। दवाओं के मामले में, सार्वजनिक स्वास्थ्य पर इसका गंभीर परिणाम हो सकता है, खासकर जब देश HIV/AIDS जैसी महामारियों का सामना कर रहे हैं।

Trade-Related Investment Measures (TRIMS Agreement)
चीजों के व्यापार पर एक बहुपक्षीय समझौता। यह व्यापार संबंधी निवेश के कदमों का निषेध करता है, जैसे स्थानीय content requirements जो कि GATT 1994 के बुनियादी प्रावधानों के संगत हैं। ऐसा माना गया है कि TRIMs समझौता नये प्रवेशकों को औद्योकीकरण और प्रतियोगिता करने से रोकता है। समझौते में राष्ट्रीय सरकारों के खिलाफ बहुराष्ट्रीय कारपोरेशनों का पक्ष लिये जाने के कारण पैदा हुई समस्याएं इससे और ज्यादा इस प्रकार बढ़ गयी हैं जिसमें WTO विवाद व्यवस्था पैनल अन्तर्राष्ट्रीय कानून की व्याख्या को पूरी तरह अपना कर TRIM समझौता और GATT धारा की दायित्वों को संयुक्त कर लिया है।

U

United Nations Conference on Trade and Development (UNCTAD)
संयुक्त राष्ट्र संघ का एक स्थायी अन्तर्शासकीय निकाय जिसका उद्देश्य यह है कि व्यापार निवेश और विकासशील अर्थव्यवथाओं के विकास के अवसरा ज्यादा से ज्यादा बढ़ें, ताकि विश्व अर्थ व्यवस्था में के साथ एकीकरण होने की उनकी कोशिशों में सहायता मिले। 1964 में स्थापित इस संगठन के मुख्य तीन काम हैं– 1. अन्तर्शासकीय वार्ताओं के लिये मंच, 2. शासकीय प्रतिनिधियों और विशेषश्रों के डिबेट के लिये शोध, नीति विश्लेषण और आंकड़ो जमा करने का काम करना, 3. तकनीकी सहायता देना, जो विकासशील देशों की खास जरूरतों के अनुकूल बनायी हुई हो, जिसमें सबसे कम विकसित देशों और संक्रमण कर रही अर्थ व्यवस्था की जरूरतों की खास जरूरतों का ध्यान रखा गया है।

W

World Bank
यह सामान्य अर्थों में बैंक नही है, बल्कि संयुक्त राष्ट्र की एक विशेष एजेन्सी है, जो 184 देशों से बनी है और इस बात के लिये संयुक्त रूप से जिम्मेदार हैं कि संस्था में वित्त की व्यवस्था क्या हो और धन किस प्रकार खर्च हो। ''विश्व बैंक'' ऐसा नाम है जिसका उपयोग International Bank for Reconstruction and Development (IBRD) और International Development Association (IDA) के लिये किया जाता है। ये संगठन विकासशील देशों को कम ब्याज का कर्ज, बिना ब्याज का उधार और अनुदान उपलब्ध कराते हैं हालांकि दुनिया भर की गरीब सरकारें लगातार इसे विकास वित्त का योगदान करने वाला मानती हैं, विश्व बैंक और उसके सहयोगी संस्थानों की यह आलोचना की जाती है कि यह आर्थिक उदारता अपनाकर और निजी अन्तराष्ट्रीय निवेश के लिये गारण्टी के जरिये अनुदान पाने वाले देशों की राष्ट्रीय प्रभुसत्ता पर आधात पहुंचाने के लिये की जाती है। इसे पश्चिमी हितों को सहयोग देने वाली आर्थिक नीतियां लादने के लिये अमेरिका या पश्चिमी टूल का दोषी माना जाता है। आलोचकों की दलील है कि बैंक जिस मुक्त व्यापार सुधार नीतियों, की वकालत करता है, उन्हें खराब तरीके से, या जल्दबाजी में या गलत क्रम से या बहुत कमजोर प्रतियोगिता विहीन अर्थव्यवस्था में लागू किया गया तो वे अकसर आर्थिक विकास के लिये नुकसानदायक हैं।

World Economic Forum (WEF)
यह निजी ''मुनाफा–के–लिये–नहीं'' वाला प्रतिष्ठान है जो व्यापार, राजनीतिक, बौद्धिक और अन्य समाजिक नेताओं के लिये सम्मेलन संचालित करता है। WEF स्विस कस्बे डावोस में स्थित है और वहीं यह सालाना सम्मेलन आयोजित करता है। हालांकि इसके पास निर्णय करने की कोई शक्ति नहीं है, दुनिया के कई व्यवसाय और राजनीति के नेता WEF में महत्व के मुद्दों पर चर्चा करते हैं। इसके आलोचकों वास्तव में एक व्यापार फोरम है, जहां सबसे धनी व्यापार आसानी से आपस में सौदा कर सकते हैं और दुनिया के सर्वाधिक ताकतवर राजनीतिज्ञों में प्रचार कर सके हैं और मकसद गरीबी के समान आर्थिक समस्या को हल करने से ज्यादा मुनाफा कमाना है।

World Trade Organisation (WTO)
इसका आकार बढ़ता गया और इसने GATT की प्रणाली की जगह ले ली। WTO का प्रारूप चार्टर 1948 में बना लेकिन अमेरिकी कांग्रेस से समर्थन न मिलने के कारण इसकी पुष्टि नहीं हो पायी और GATT 1995 तक कायम रहा। GATT

समझौता WTO समझौते के भीतर अभी भी अस्तित्व मे है। ये संगठन अन्तराष्ट्रीय व्यापार रिश्तों में भविष्य बताने के लिये और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को फैलाने और उसे नियमित करने के लिये बनाया गया था।

World Intellectual Property Organisation (WIPO)

WIPO का मुख्यालय स्विटजरलैंड में जिनेवा में है। यह संगठनों ककी संयुक्त राष्ट्र की प्रणाली की 16 विशेषज्ञ एजेन्सियों में से एक है। यह 23 अन्तर्राष्ट्रीय संधियों का प्रशासन करती है, जो बौद्धिक सम्पदा की सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं से संबंधित है। इस संगठन में 182 देश सदस्य हैं और यह WIPO के द्वारा सीधे स्वीकृत भावी विश्व पेटेन्ट का रास्ता साफ करेगा। यह विकासशील देशों और उनके नागरिकों के लिये बुरी खबर है क्योंकि वे वह सीमित आजादी भी खो देंगे जो उनके पास राष्ट्रीय विकास के लक्ष्यों की पेटेन्ट प्रणाली को ठीक करने के लिये है।

एक राष्ट्रीय मानव की दुःखद त्रासदी

• प्रषान्त कुमार दुबे

इस समय पूरे देष में कुल 75 आदिम जनजातियाँ हैं और उनमें से प्रदेष में 3 आदिम जनजातियाँ निवासरत हैं बैगा, भारिया तथा सहरिया। प्रदेष में रहने वाली बैगा जनजाति को राष्ट्रीय मानव का दर्जा भी दिया गया है। सरकार इनके हितों को विषेष रूप से संरक्षित करने का प्रयास कर रही है तथा यह चाहती है कि ये जातियाँ भी समाज की मुख्यधारा से जुड़ें। मुख्यधारा क्या है? यह एक चिंतन का विषय है किन्तु गाहे–बगाहे प्रयास जारी हैं। बैगा जनजाति महाकौषल क्षेत्र में निवास करती हैं और अपनी सांस्कृतिक धरोहरों को सहेजने की साक्षी है। बैगा जाति में निरक्षरता आज भी 90–95 प्रतिषत् है। ऐसे में अनिता का नवीं तक पढ़ना और कुछ बनने का सपना उस समय चूर हो गया, जबकि वह प्रसव के दौरान होने वाली मौत का षिकार हो गई।

हाल ही में मंड़ला जिले की फूलसागर पंचायत के पड़रिया ग्राम के सुझोरू टोला की अनिता भारती जो कि कक्षा नवीं तक पढ़ी थीं,, ने शासकीय तंत्र की लापरवाही का खामियाजा भुगता । अनिता को अभी डेढ़ वर्ष पूर्व ही घुघरी से ब्याहकर लाया गया था । आप समझ सकते हैं कि जिन जातियों में पढ़ाई–लिखाई के कोई मायने ना हों वहाँ अनिता के नवीं पास होने के मायने क्या रहे होंगे ? पति संतोष भी बारहवीं तक पढ़ा था, परन्तु तब तक वह मजदूरी करता था, अभी तीन माह पूर्व ही वह संविदा षिक्षक के पद पर चयनित हुआ था। परिवार में अनिता की हर बात मानी जाती थी,। अनिता जब पेट से हुई तो दादीसास, दल्लोबाई के ग्रामदाई (अप्रषिक्षित) होने के बावजूद अनिता ने सुरक्षा व शासकीय योजनाओं के कथित लाभ की दृष्टि से शासकीय चिकित्सालय में ही प्रसव कराना उचित समझा। आमतौर पर मिलने वाली पति की सहमति के अलावा घरवालों की सहमति मिली और दि. 19 अगस्त को अनिता को मंड़ला के जिला चिकित्सालय में भर्ती करा दिया गया।

शारीरिक रूप से स्वस्थ, सामान्य वजन, बढ़िया कद–काठी, सांवले वर्ण की अनिता को जिला चिकित्सालय में भर्ती कराने के लिये उसके मायके से निजी वाहन (1500 रुपये) किया गया और तब तक वह सामान्य थी किन्तु जिला चिकित्सालय में भर्ती करने के उपरांत से ही अनिता की हालत बिगड़ने लगी । उसे हरदम झटके पड़ने लगे । भर्ती होने के बाद केवल एक बार ही डॉक्टर अनिता को देखकर गई थीं और उसके बाद तो नर्स ही काम चलातीं रहीं। हालत बिगड़ने पर संतोष व परिजनों ने चिकित्सक से संपर्क करना चाहा परन्तु चिकित्सक अस्पताले में होते तो मिलते। उस दिन शनिवार का दिन था और शनिवार के दिन हॉफ डे के नाम पर चिकित्सक नर्सों के हवाले मजमा

> इसे तकनीक और पारंपरिक ज्ञान की जंग भी कहा जा सकता है कि गांव की अनपढ़ भल्लोबाई के हाथों आज तक एक भी मौत नहीं हुई और उसी की बहू शासकीय चिकित्सालय में मर गई। पूरा पड़रिया गाँव अभी तक सकते में है और सभी के मन में एक ही चीज है ऐार वह यह कि जचगी करायेंगे तो घर में ही, क्योंकि शासकीय चिकित्सालयों में देखभाल नहीं होती, वे वहां दुत्कारे जाते हैं और मार डाले जाते हैं। अनिता दो दिन तड़पती रही,, चिकित्सक एक झटके के लिये आये ओर आंग्ल भाषा के चिर–परिचित जुमले 'आई एम सॉरी' कहकर अनिता की आंखें भींच दी। सवाल यहाँ केवल अनिता के मरने का नहीं है बल्कि यहाँ पर आदिम जनजातियों के महिला विकास का एक अध्याय समाप्त हो गया, क्योंकि यदि अनिता जीवित रहती तो वह ना केवल अपने घर के चिरागों को रोषन करती बल्कि अपने समाज के लिये मिसाल बनकर अन्य महिलाओं के लिये संभावनाओं के द्वार खोलती। परन्तु यह चिराग बुझा दिया गया। यह बहुत ही सीधे अर्थों में राष्ट्रीय मानव की प्रायोजित मौत है और यह दुःखद त्रासदी है कि जिस जाति के अस्तित्व को बचाने के लिये सरकार विषेष प्राधिकरण बनाकर प्रयास कर रही है वहीं अनिता की इतनी आसान मौत स्वीकारी जा रही है।

छोड़कर किनारे हो लेते हैं। चिकित्सक नहीं आईं और झटकों के सटीक ईलाज के नाम पर महज़ नमक–पानी का घोल यानि बोतल चढ़ती रहीं। ड्यूटी नर्स ने एक ऐसा इंजेक्षन लिख कर दिया जो कि पूरे मंड़ला में कहीं भी नहीं मिला, इसके बाद विकल्प पर कोई भी विचार नहीं किया गया। कई बार मान–मनुहार करने पर भी जब चिकित्सक नहीं आये तो मरता क्या ना करता, संतोष ने उनके घर की राह पकड़ी परन्तु लगता है संवेदनायें पानी बन कर कह रही थीं और कोई उनमें बांध लगाने वाला न था। संतोष थक–हार कर वापस आ गया और डॉक्टर नहीं आईं।

जागते–सोते रात बीती और अनिता के झटके एक बार भी बंद नहीं हुये, एक बार निजी चिकित्सालय की ओर जाने के बारे में भी सोचा गया किन्तु मजबूरी अपना दामन नहीं छोड़ती और आर्थिक तंगी ने उन्हें वहीं रोके रखा। रविवार

सुबह बेहोषी और झटके की हालत में अनिता ने एक मृत षिषु को जन्म दिया और । पूरे परिवार की खुषियाँ तो काफूर हो गईं थीं किन्तु अनिता के बिगड़ते हाल ने सभी को चौकस किया। परिजनों ने पुनः मनौती शुरू की, किन्तु एक पुरूष चिकित्सक के अलावा कोई भी सामने ना आया। परिजन कहते हैं साहब ! उन्होंने भी आते ही नर्सों से अंग्रेजी में बात करना शुरू कर दिया और अनजानी सी सांत्वना देकर चले गये। हालत फिर खराब हुई और इस बार जब परिजन चिकित्सक को लाये तो चिकित्सयक ने अनिता के आंखें मींचने का काम कर दिया और पुनः आंग्ल भाषा के चिर–परिचित जुमले का इस्तेमाल किया 'आई एम सॉरी' । असंवेदनषीलता का परचम यहाँ तक लहरा कि अनिता का पोस्टपार्टम करना भी उचित नहीं समझा गया और खानापूर्ति कर मुत्यु प्रमाण पत्र जारी कर दिया गया जिसमें मुत्यु का कारण एक्लेम्पसिया बताया गया। अनिता के मरने के बाद उसे षव वाहन भी नहीं मिला और परिजनों ने 1600 रुपये में गाड़ी कर अनिता को घर लाया। इस पूरे प्रकरण में परिवार को योजनाओं का लाभ मिला 1700 रुपये और उसके परिवार के खर्च हो गये 3000 रुपये और अनिता की जान शी चली गई।

गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले इस परिवार में पाने 5 एकड़ जमीन में 8 जन हैं। इस साल पानी भी कम गिरा है तो अभी से ही पेज[1] शुरू हो गया है। राषन दुकान गाांव से 5 किलोमीटर दूर ग्वारी गांव में है जो कि माह में 2–3 दिवस ही खुलती है और पीला कार्ड होने पर भी आज तक इस परिवार को कभी पैंतीस किलो राषन ना मिला। गाँव में लगभग 70 परिवार है और जिनमें से 45 परिवार किसान (गोंड) तथा 30 परिवार बैगाओं के अलावा अन्य जातियाँ भी हैं।

स्वास्थ्य सेवाओं के नाम पर गाँव से 3 कि.मीटर दूर फूलसागर का उपस्वास्थ्य केन्द्र ही है और जिसमें भी नर्स ही है और ज्यादा कुछ हो तो 16 कि.मीटर दूर मंड़ला जाओ। जबसे बरगी बांध बना है तब से चार महीने ठेल का पानी भी भरा रहता है और जिससे आने–जाने का रास्ता भी बंद रहता है तथा ज्यादा पानी गिर जाये तो एकमात्र विकल्प नदी उतरने का इंतजार करो । आंगनवाड़ी सिझौरू टोला से आधा कि.मी. दूर पड़रिया टोला में है और कार्यकर्ता आती हैं फूलसागर से। मायने साफ हैं कि वह कब खुलती होगी और उससे क्या–क्या मिलता होगा? हाँ, लेकिन अनिता ने पोषाहार भी लिया और उसे दो टीके भी लगे थे।

गाँव की दाई भल्लोबाई यानी अनिताबाई की दादी सास की कसक अब जिन्दगी भर के लिये हो गई है कि उन्होंने गांव की हर महिला की जचगी कराई, सभी को बचाया किन्तु अपनी बहू को ना बचा पाई। वे अपने पारंपरिक ज्ञान का बखान करते हुये कहती हैं कि हम जानते हैं कि जब झटके पड़ते हैं तब क्या किया जाना चाहिये ? चेहरे पर उभरी सिलवटें तब और जीवंत हो जाती हैं जब वे कहती हैं कि हम तो हाथ ड़ालकर फूल भी बाहर निकाल लेते हैं। यह एक कला है जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी सहेजी जाती है, पोसी जाती है और हस्तांतरित की जाती है। उसे मलाल है कि वह अपनी बहू को नहीं बचा पाई, उनका कहना है कि बदलते समय के साथ अब हम हंसिया छोड़ कर ब्लेड़ से ही नाल काटते हैं तथा साफ धागा भी बांधते हैं। भल्लोबाई बड़े ही नाराजी के साथ कहती हैं कि पढ़ाओ–लिखाओ तो यही होता हे कि अपनी चीज भी हाथ से जाती है और कुछ मिलता भी नहीं। विजयाराजे योजना के पचास हजार रूपयों पर वह नाराजगी से कहतीं हैं कि क्या वे रूपये हमें हमारी अनिता वापस कर देगें?

योजनाओं के इस प्रदेष में जहाँ जन्म के पूर्व से लेकर मृत्युपर्यन्त योजनाओं का अंबार है, एक राष्ट्रीय मानव की दुःखद त्रासदी यह संकेत देती हैं कि षासन की मंषा और क्रियान्वयन में स्पष्ट अंतर है। अनिता के परिवार के पास दीनदयाल अन्त्यादेय उपचार योजना का कार्ड होना और उसके बाद भी उन्हें सामान्य दवायें भी बाजार से ले कर आना, योजनाओं पर प्रष्नचिन्ह की काली छाया देती है। वैसे भी योजनाओं की मृगमरीचिका अभी भी लोगों के पल्ले नहीं पड़ पाई हैं । शासन की इस अतिमहत्वाकांक्षी योजना को मंड़ला जिले के संदर्भ में देखें तो हम पाते हैं कि मंड़ला में 82044 परिवार पात्र हैं और अभी तक 76000 परिवारों को ही कार्ड़ वितरित हुये हैं, इसके मायने आज भी 6044 परिवार तो योजना में शामिल ही नहीं हो पाये है, जबकि योजना दो वर्ष पूर्व से संचालित है। और विगत् वर्ष (05–06) का बजट था 56,35,571 रूपये यानि प्रति परिवार 68.70 रूपया। और यही बजट घट कर चालू वित्त वर्ष (06–07) में 36,78,000 रूपये यानि प्रति परिवार 44.82 रूपया कर दिया गया तो सवाल यह है कि कहाँ हैं प्रति परिवार के 20,000 रूपये ?और उसमें से भी खर्च हुआ महज् 21 प्रतिषत् यानि मंड़ला के गरीब परिवार महज़ 12,28,468 रूपयों में ही स्वस्थ हो गये। विगत् वर्ष की तुलना में इस वर्ष 65 प्रतिषत तक बजट में कटौती की गई। मंड़ला में स्त्री एवं षिषु रोग विषेषज्ञों के क्रमषः 100 तथा 75 प्रतिषत् पद रिक्त पड़े हैं। यह भी ध्यान देने योग्य है कि जिले में कुल जमा 466 बिस्तर हैं अर्थात् 2111 व्यक्तियों पर एक बिस्तर है। मंड़ला की मातृत्व मृत्यु दर (926 प्रति लाख) के हिसाब से यहाँ प्रतिवर्ष 250 महिलाओं की

---

[1] पेज – एक तरल भोज्य पदार्थ जो कि 100 ग्राम मकई के आटे में 3–4 लीटर पानी ड़ालकर बनाया जाता है और इसे सामान्यतः जंगली भाजी चरौंटा और चेंच के साथ खाया जाता है)। यह महज आकस्मिक जरूरतों को पूरी कर सकता है लेकिन उससे पोषक तत्वों की उम्मीद करना बेमानी है।

मौत हो जाती है जबकि प्रषासन इसे 60 मौतें करार देता है, इसी प्रकार वर्ष भर में यहाँ पर 2100 षिषु काल के गाल में समा जाते हैं।

पूरा पड़रिया गाँव अभी तक सकते में है और सभी के मन में एक ही चीज है आैर वह यह कि जचगी करायेंगे तो घर में ही क्योंकि शासकीय चिकित्सालयों में देखभाल नहीं होती, दुत्कारे जाते हैं और मार ड़ाले जाते हैं । अब यह सरकार को तय करना है कि वह किस तरह से और किन प्रयासों को गति देना चाहती है ? जिस तरह से अनिता की मौत हुई, वह शासकीय प्रयासों की कलई तो खोलती है ओर आदिम जनजातियों के लिये चलाये जा रहे विषेष अभियानों की एक तस्वीर भी हमारे समक्ष रखती है। यह बहुत ही सीधे अर्थों में राष्ट्रीय मानव की प्रायोजित मौत है और यदि यही सिलसिला चलता रहा तो फिर ना ही अनिता जैसी बैगा महिलायें पढ़ेंगी और ना ही शासकीय संस्थानों में प्रसव कराने की जिद ही करेंगी। सवाल यह भी है कि एक के बाद एक धड़ल्ले से जारी की जा रही योजनाओं के बीच सरकार अपने तंत्र को संवदनषील बनाने के लिये क्या प्रयास कर रही है ?

(लेखक सामाजिक कार्यकर्ता हैं और कार्ट से जुड़े हैं।)

....

आदिवासियों पर फिर गहराया खाद्य संकट
जन वितरण प्रणाली की स्थिति बदतर

• सीमा प्रकाश

कोरकू आदिवासी बाहुल्य खालवा ब्लाक फिर गंभीर खाद्य संकट से जूझ रहा है। यहां के अधिकततर आदिवासी किसान मजदूर घरेलू खादय असुरक्षा के षिकार हो रहे है। यह स्थिति इतनी गंभीर हो गयी है कि लोग रेत कंकड़ मिले मोटे चावल के टुकड़े (स्थानीय भाषा में चूरी) खने को मजबूर हो गये है। यह स्थिति क्षेत्र में गरीबी रेखा द्वारा दिये जाने वाले खाद्यान्न के वितरण कम किये जाने से पैदा हुई है। पिछले छः महीनों से अधिक समय से गरीबी रेखा का निर्धारित प्रतिमाह प्रति परिवार 35 किलो कोटे का घटाकर 23 किलो कर दिया गया है।, अर्थात् बीपीएल हितग्राहियों को निर्धारित कोटे का मात्र 65 प्रतिषत खाद्यान्न उपलब्ध कराया जा रहा है।

स्पंदन समाज सेवा समिति ने हाल ही खालवा क्षेत्र का सर्वेक्षण किया और स्थिति का जायजा लिया। डाभिया गांव में स्थितत राषन की दुकान का अध्ययन करने पर पता चला कि इसके तहत तीन गांवों के 279 बीपीएल कार्ड धारकों का निर्धारित कोटा करीब 78 क्विंटल है, जबकि पिछले छ माह से मात्र 28 क्विंटल खाद्यान्न का आंवटन हो रहा है, जो 35 प्रतिषत आवंटन गिराट को दर्षाता है। एक औसत परिवार में 35 किाले खाद्यान्न करीब 15 दिन की खाद्य सुरक्षा प्रदान करता था, परन्तु वर्तमान में यह घटकर मात्र एक हफ्ते तक ही पर्याप्त होता है।

खाद्य सुरक्षा की स्थिति की विकरालता का अंदाज इससे भी लगाया जा सकता है कि किसानों, मजदूरों को इसका कोई पूर्वानुमान नहीं था। यदि होता तो वे विकल्प के रूप में परंम्परागत ज्वार को थोड़ी अधिक मात्रा में उगा सकते थे। कुछ किसानों ने ज्वार बोया था, परन्त फूल लगने की अवस्था में वर्षा ने उस फसल को भारी नुकसान पहुंचाया। वैसे भी खालवा क्षेत्र में आदिवासियों ने परम्परागत खाद्यान्नों (ज्वार, मक्का, कोढ़ा, कुटकी) से विमुख होकर नगदी फसल कपास और सोयाबीन उगाना शुरू कर दिया। वर्तमान में इन फसलों का रकबा 95 प्रतिषत से भी अधिक हो गया है।

वर्तमान में बाजार में गेहूं की दर 13 से 14 रूपये प्रति किलो तक पहुंच गयी है जो अधिकतर आदिवासियों की खरीद क्षमता से बाहर है। विकलप्ल के रूप में ज्वार भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है। इस कारण रेत–कंकड मिले मोटे चावल के टुकड़े (चूरी) जो 4–5 रूपये प्रति किलो तक मिलती थी, अब 9–10 रूपये प्रति किलो तक बिकने लगी है। साप्ताहिक ग्रामीण बाजारों में इनकी बिक्री धड़ल्ले से हो रही है। गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों के लिये यह प्रति किलो 50 प्रतिषत अधिक आर्थक बोझ डाल रही है। क्षेत्र के किसान मजदूर अगले तीन–चार माह तक इस स्थिति के बने रहने या बद्तर बनने की आशंका कर रहे हैं। वे कहते हैं कि अगली गेहूं की कटाई तक यही स्थिति बनी रहेगी। इस स्थिति के लिये वास्तविकता में सरकार जिम्मेदार है। समय पर न्यूनतम सर्मथन मूल्य जारी न करने के कारण देश का अधिकतर गेहूं रिलायंस या आई.टी.सी. जैसी बड़ी कम्पनियों द्वारा खरीद लिया गया। यह स्थिति तब और गंभीर हो गयी जब सरकार का बफर स्टाक भी कम हो गा। मजबूरी में सरकार को आस्ट्रेलिया से गेहूं आयात् करना पड़ा जो अब राशन की दुकानों से वितरित किया जा रहा है। स्थानीय लोग इसे ''लाल गेहूं'' के नाम से पुकारते है। लोगों के अनुसार इसका स्वाद अजीब है और यह पेट खराब करता है। वे उस समय को याद करते है। जब अमेरिका से गेहूं अ आया था और ''गाजर घास'' छोड़ गया। पता नहीं आस्ट्रेलिया का गेहूं क्या गुल खिलायेगा। गरीबी और कर्ज से त्रस्त कई किसानों ने इसे खेतों में बो दिया है। अब इसका परिणाम देखना बाकी है।

जहां तक खालवा का प्रश्न है, प्रशासन को इस पर अधिक ध्यान देना चाहिये। यह पांचवी अनुसूची का अधिसूचित क्षेत्र है और कुपोषण और भुखमरी के लिये अत्यंत संवेदनशील है। पिछले 2–3 वर्षों से यह क्षेत्र कुपोषण से मौतों के लिये सुर्खियों में रहा है। यहां सभी मानव विकास सूचकांक न्यूनतम हैं और अस्थाई पलायन काफी व्यापक है। इनत तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रशासन को तत्काल राहत के लिए कदम उठाते हुए यहां के बीपीएल परिवारों को पूरा खाद्यान्न उपलब्ध कराना चाहिये। यह कहकर कन्नी काट लेना कि आगे से ही खाद्यान्न कम आ रहा है, गरीबी और भुखमरी की उपेक्षा होगी। वैसे भी यह प्रश्न वाचक है कि क्या हमारे जन प्रतिनिधियों और लालफीताशाही के एजेण्डों में गरीबी और भुखमरी पहले नंबर पर है।? यदि होता तो वे पिछले 6–7 महीने से चल रहे इस खाद्य संकट के बारे में कोई न कोई पहल आवश्यक करते या वैकल्पिक व्यवस्था करते हैं।

(लेखिका सामाजिक कार्यकर्ता हैं और स्पंदन संस्था से जुड़ी हैं।)

....

रोजगार गारण्टी कानून : अनुभवों का एक साल

• सचिन कुमार जैन

रोजगार के अधिकार को कानूनी अधिकार का रूप देने के उद्देष्य से अस्तित्व में आये राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी कानून का पहला साल बहुपक्षीय अनुभवों से भरपूर रहा है। जहां एक तरफ भूमण्डलीकरण के दौर में सरकार बहुत तेज गति से अब आम आदमी के प्रति अपनी जिम्मेदारियों से नाता तोड़ रही है तो वहीं दूसरी ओर एक संगठित जन संघर्ष के बाद ऐसी ही सरकार को रोजगार कानून बनाना पड़ा। यह अनुभव सिद्ध करता है कि अब लोकतंत्र ''लोक'' यानी जनता को अपने अधिकारों के लिये कदम–कदम पर 'तंत्र' यानी सरकार के साथ संघर्ष करते रहना पड़ेगा। संघर्ष के बिना संभवतः अब जीवन का नैसर्गिक अधिकार मिलना भी संभव नजर नहीं आता है। रोजगार की गारण्टी देने वाले इस कानून की सबसे खास बात यह है कि अब गांव में रहने वाले किसी भी व्यक्ति को सरकार से रोजगार की मांग करने का अधिकार है और सरकार उस मांग को पूरा करने के लिये बाध्य है।

सरकार ने यह कानून बनाकर लागू तो कर दिया पर यह मानना गलत है कि रोजगार गारण्टी कानून से मजदूरों को साल भर में एक सौ दिन का रोजगार ही केवल मिलेगा, वास्तविकता तो यह है कि इस कानून से हम सबने यह सीखना भी शुरू किया है कि जब तक हम अपने अधिकारों का निर्धारित प्रक्रिया के तहत उपयोग करने की आदत नहीं डालेंगे तब तक ऐसे अधिकार निरर्थक ही रहेंगे। 2 फरवरी 2006 से लागू हुये रोजगार गारण्टी कानून की उम्र अब एक साल की हो गई है और 12 महीनों की इस अवधि के अनुभव 12 सीखों पर रोषनी डालने के लिये हमें जरूर प्रेरित करते हैं।

जब यह कहा जाता है कि आज के परिदृष्य असंगठित क्षेत्र के मजदूरों को रोजगार का अब संवैधानिक अधिकार मिल गया है तो स्वाभाविक रूप से यह सवाल भी खड़ा होता है कि क्या वास्तव में ऐसा अधिकार मिलना बहुत आसान है या क्या सरकार लोगों को इस तरह के अधिकार का उपयोग करने की स्वतंत्रता भी देगी? रोजगार कानून वैसे तोत समाज के गरीबों के लिये बहुत ही महत्वपूर्ण कदम है किनतु सरकार के नजरिये से इस कानून में होने वाला पचास हजार करोंड़ रूपय का दुखदायी ही नजर आ रहा हे।

यह कानून अपने आप में अधिकार के लिये संघर्ष की एक प्रक्रिया सिखाता हे। यदि कोई भी व्यक्ति इसका उपयोग करता है तो उसे तीन अहम् चरणों से गुजरना होगा। पहला चरण तो यह है कि पंचायत स्तर पर पंजीयन होने और रोजगार कार्ड जारी होने के बाद उसे काम की मांग करनी होगी। काम की मांग किये बिना उसे रोजगार नहीं मिलेगा। दूसरा चरण है यह देखते रहना कि हर मजदूर को कानून में दर्ज सुविधायें, लाभ और मानवीय व्यवहार ही मिले। यह कतई नहीं माना जाये कि सरकार समाज के गरीब, असंगठित और वंचित मजदूरों पर किसी भी तरह का 'उपकार या दया' कर रही है। पर्याप्त मजदूरी सही समय पर मिलना चाहिये, यह भी उनका कानूनी अधिकार है। और तीसरे चरण में यह देखा जाना है कि ग्रामीण रोजगार गारण्टी कानून एक मजदूरी के अधिकार का कानून मात्र नहीं है बल्कि यह गांव और समाज में सहभागी विकास की एक सार्थक प्रक्रिया को आगे बढ़ायें।

विचारों इस धरातल पर खड़े होकर जब हम बीते एक साल पर नजर डालते हैं तो पता चलता है कि रोजगार गारण्टी कानून अपने आप में एक चुनौतीपूर्ण स्थिति में आ चुका हे। एक क्रांतिकारी सोच को लागू करने की तैयारी और और क्षमतायें सरकार में नजर नहीं आ रही है। इसकी प्रक्रिया के तहत हम सभी यह मानते है। कि ''रोजगार की मांग'' पैदा होना चाहिये और सरकार को ''दयादाता'' की भूमिका से मुक्त होना होगा किन्तु सरकार ने ठीक इसके विपरीत व्यवहार किया हे। मध्यप्रदेष में 43 लाख ग्रामीण परिवारों का पंजीयन कर जॉब कार्ड बनाने की सार्थक कोषिष करने के बाद सरकार का दूसरा कदम पूरी तरह से भट गया नजर आता है। राज्य में एक आम व्यक्ति रोजगार की मां करे इसका सरकार ने अवसर ही नहीं दिया और बिना मांग के लोगों को एक साल में 1485 लाख मानव दिवस रोजगार उपलब्ध कराया। कानून रोजगार मिलने की बात तो कहता है परन्तु किसी भी तरह के अधिकारों के हनन की स्थिति में मजदूर अपनी लड़ाई तब तक नहीं पायेगा जब तक उसके पास इस बात का प्रमाण नहीं होगा कि उसने काम की मांग की थी पर उसे काम नहीं दिया गया।

मध्यप्रदेष में सरकारी आंकड़ों के अनुसार 25.48 लाख परिवारों को काम दिया गया है किन्तु उमरिया, छतरपुर, श्योपुर और टीकमगढ़ में केवल सात फीसदी मजदूरों के पास उनके आवेदन की पावती है। श्योपुरा के रोहणी गांव के मजदूरों ने पंचायत की गुहार की परन्तु जिम्मेदार अफसर आवेदन पंजीकृत डाक से आवेदन करना पड़ा; मुद्दा यह है कि आखिर पावती पर बवाल क्यों है? वास्तव में यही पावती कानूनी संघर्ष और सरकार की कजवाब–देहिता का आधार बनती

है। सरकार के अफसर जानते है कि यदि जिम्दारी से बचना है तो पावती पर लगाम कसो। जब पासवी ही नहीं होगी तो प्रमाण क्या होगा। एक तरह से यह प्रवृत्ति रोजगार गारण्टी कानून के सामने बड़ी चुनौती है।

अगला मुद्दा मजदूरी के सम्बन्ध में बार–बार उभरकर आ रहा है। सरकार मजदूरी का भुगतान लक्ष्य आधारित प्रक्रिया के आधार पर कर रही है और आम तौर पर यह देखा गया है कि कठोर–पथरीली जमीन पर काम करने के लिये भी वही मजदूरी दर है जो दर नरम मिट्टी पर काम करने के लिये दी जाना चाहिए। परिणाम स्वरूप मजदूरों को दस घंटे की मेहनत के एवज में 30 से 40 रूपये की मजदूरी ही मिल पा रही है। यू ंतो कानून कहता है कि मजदूरी का भुगतान हर पंद्रह दिन में हो ही जाना चाहिए; परन्तु अब भी बड़े स्तर पर इस प्रावधान का पालन नहीं हो रहा है। विचारधारा तो यह कहती है कि रोजगार गारण्टी योजना के अन्तर्गत पंचायत या गांव में विकास की रूपरेखा तय करने का अधिकार ग्रामसभा और पंचायत को है। इसके लिये पंचायतें पांच साल की एक विकास की दृष्टि योजना और क्रियान्वयन के लिये हर साल वार्षिक योजना बनायेंगी किनतु दृष्टि योजना में पंचायतों की नहीं बल्कि सरकार और योजना बनाने वाली ठेकेदार संस्थाओं की ज्यादातर दृष्टि का समावेष हुआ है। मध्यप्रदेष में 18 में से 13 जिलों में एक–एक पंचायत की पांच साल की योजना तीन–चार घंटों में बनाकर तैयार कर दी गई है। केन्द्र सरकार के मार्ग निर्देषों की मानें तो हर वर्ष दिसम्बर में ग्रामसभा और पंचायतें वार्षिक योजना तैयार करेंगी; पहला साल तो गुजर गया परनतु राईट टू फूड कैम्पैन का छह जिलों का अवलोकन स्पष्ट करता है कि वार्षिक योजना बनाने के लिये न तो पंचायतों के स्तर पर समुचित क्षमतावृद्धि की गई है न ही इसे सरकार बहुत ही महत्वपूर्ण मानती है। ऐसे में भर है कि विकास की मूल भावना पर कुठाराघात न हो जाये। राज्य में ज्यादातर ग्रामीण मिट्टी का उपचार और पानी बचाने का काम सबसे महत्वपूर्ण मानते हैं किन्तु सरकार ने सड़क के काकाम को सबसे महत्वपूर्ण माना है। और राज्य में सबसे ज्यादा सड़कें ही बनी हैं। कानूनी प्रावधानों में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले पारिवारों, दलित आदिवासी गरीबों और भू–सुधार के हितग्राहियों की ''निजी भूमि'' पर भी उपचार, सिंचाई और उपयोगी बनाने के लिये रोजगार योजना में काम किया जा सकता है परन्तु मध्यप्रदेष की कार्ययोजना और कार्यषैली में इन वगों को कोई स्थान अब तक नहीं मिला है। भारत सरकार की ताजा रिपोर्ट के अनुसार बिहार में 1.15 लाख, राजस्थान में 2.93 लाख और आंध्रप्रदेष में 95 हजार गरीब परिवारों की आजीविका को सुदृढ़ बनाने के काम हुये पर मध्यप्रदेष में ऐसा कोई परिवार लाभ न हो पा सका। इसी तरह मध्यप्रदेष में लगभग 450 विकलांगों को ही रोजगार का अधिकार मिला जबकि आंध्रप्रदेष में यह संख्या 18 हजार, पष्चिम बंगाल में 56 हजार, राजस्थान में 58 हजार और हिमाचल प्रदेष में 14 हजार से ज्यादा रही है। एक साल के अनुभवों के विष्लेषण से एक बात तो स्पष्ट रूप से सामने आई है कि सरकार के लिये अब भी यह एक मजदूरी देने वाला कनून है जिसमें सरकार दाता की भूमिका में है। यह एक अधिकार है ऐसी मान्यता स्थापित करने के लिये लगातार संघर्ष की प्रक्रिया चलाना बाकी है।

(लेखक भोजन का अधिकार अभियान, म.प्र. से जुड़े हैं।)

कैसे होगा भूजल पुनर्भरण

• निलेश देसाई

विगत 22 जुलाई को दिल्ली में भू जल के कृत्रिम पुनर्भरण संबंधी परामर्शदात्री परिषद की प्रथम बैठक में प्रधानमंत्री श्री मनमोहनसिंह द्वारा उद्घाटन में भूजल पुनर्भरण का जन अभियान चलाने का आह्वान किया। यह आह्वान सरकार की चिन्ता को तो दर्शाता ही है साथ ही भूजल की गंभीर स्थिति को भी इंगीत करता हैं। आजादी के समय भारत में प्रतिव्यक्ति सालाना जल उपलब्धता 5000 घन मीटर थी जो अब घट कर 1760 घन मीटर पर पहुंच गई है। राजस्थान, पंजाब, हरियाणा व दिल्ली जैसे क्षेत्रों में तो यह 300 से 700 घन मीटर प्रति व्यक्ति पहुंच गया है। जल संसाधन मंत्रालय के वर्ष 2004 के आकलन के अनुसार देश में 5723 ब्लाक में से 1065 ब्लाक भूजल के अतिदोहन के रूप में चिन्हित किये गये है। जिसमें पंजाब 75 प्रतिशत, राजस्थान 59 प्रतिशत, हरियाणा 37 प्रतिशत एवं दिल्ली 78 प्रतिशत आदि सर्वाधिक अतिदोहन के क्षेत्र के रूप में सामने आये है। बहुत लम्बे समय से इस प्रकार की सरकारी चिन्ता की आवश्यकता महसुस की जा रही थी। लेकिन भू जल का पुनर्भरण केन्द्र के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत न हो कर राज्य के क्षेत्राधिकार में आता है। इसलिए यह परिषद अपने सुझावों पर कितना अमल करवा सकेगी यह विचार का विषय है।

वर्ष 2002 अप्रैल में केन्द्र सरकार ने भारत की जलनीति बनाई थी जिसमें भूजल के संरक्षण को पर्याप्त स्थान नहीं दिया गया था इसके बाद नवम्बर 2003 को म.प्र. शासन ने राज्य की जलनीति में भूजल के विकास के बारे में अवश्य लिखा है। लेकिन उसमें यह नहीं कहा गया है कि भूजल क्षमता का दोहन करते समय यह देखना चाहिए कि प्रत्येक एक्वीफर में उपलब्ध भूजल की तादाद और उसकी गुणवत्ता क्या है। भूजल का उपयोग उस सीमा तक किया जाना चाहिए जहां तक उसकी पुनः पूर्ति की जा सके। इसके अतिरिक्त, निकाले जा सकने योग्य भूजल के तकनीकी, आर्थिक व पर्यावरणीय पक्ष का ध्यान भी रखा जाना चाहिए। भूजल के अतिदोहन को रोकने के लिए प्रदेश में विषय विशेषज्ञों के उत्तरदायी सक्षम संगठन की आवश्यकता है। इसके लिए सामाजिक नियंत्रण भी सुनिश्चित किये जाने चाहिए। भूजल संकट की गंभीर स्थिति को देखते हुए भूजल का प्रथक संस्थागत ढांचा स्थापित करना जरूरी है। इसके बाद वर्ष 2002 में ए.डी.बी. (एशियन डवलोपमेंट बैंक) की म.प्र. शहरी जलापूर्ति एवं पर्यावरण सुधार की 30.35 करोड़ डालर (1365.75 करोड़ रू.) की योजना के अंतर्गत कहीं भी भूजल संरक्षण या पुनर्भरण का जिक्र तक नहीं किया गया है। इसमें सिर्फ पानी का उपयोग व व्यापार करने की वकालात की गई है, जबकि शहरों में भूजल की स्थिति अत्यन्त निम्न स्थिति में है और पुनर्भरण नगण्य है। शराब, चीनी और शीतल पेय के औद्योगिक संयंत्रों में भूजल का दोहन सबसे ज्यादा होता है। हरियाणा, उत्तर प्रदेश व महाराष्ट्र में शराब व चीनी मिलों के कारण भूजल स्तर चिन्ताजनक स्थिति में आ चुका है। इसके बावजूद आज भी इन संयंत्रों को बड़े स्तर पर मंजरी दी जा रही है। हाल ही में राजस्थान में 16 जनवरी 2004 को शराब की 23 संयंत्रों को मन्जूरी दी गई है जबकि राजस्थान में भूजल स्तर खतरनाक स्थिति में है। जयपुर व अलवर जिलों के 80 प्रतिशत गांवों में आज भी पेयजल का संकट मौजूद है। इसके बावजूद इन्हीं दो जिलों 17 संयंत्रों को मन्जूरी दी गई है।

इसके अलावा देश भर में पेप्सी, कोका–कोला जैसी पेय–म्पनियां प्रतिदिन हजारों गेलन पानी जमीन से निकाल रही है और पूरे क्षेत्र को सूखाग्रस्त बना रही हैं। केरल के प्लाचीमाड़ा में कोका–कोला कम्पनी द्वारा 40 एकड़ जमीन पर 65 बोरवेलों के जरिये 1.5 करोड़ लिटर पानी हर रोज निकाला जा रहा है। इससे आसपास का क्षेत्र जो कभी पानी और खेती के लिए हराभरा हुआ करता था, वह सूखे की चपेट में आ चुका है। देश में इस प्रकार के अनेक संयंत्र लगे है जो करोड़ों लिटर पानी रोज निकाल रहे हैं।

गिरते भूजल की समस्या का विचार समग्र रूप से करना जरूरी है न की खन्डित रूप से। हर समस्या को अलग–अलग करके देखना हमारी व्यवस्था को जो स्वभाव है उसके कारण समस्या के हल और भी ज्यादा पैचीदे बन जाते हैं। साथ ही विरोधाभासी क्रियांओं के कारण उसका असर भी हो नहीं पाता है।

जलनीति, कृषिनीति, वननीति, जैव तकनीक नीति (बॉयो टेकनालाजी) और उद्योगनीति और भूमि उपयोगनीतियां एक दूसरे की पूरक होना चाहिए। जलनीति में पानी के उपयोग की जो प्राथमिकताएं तय की जाये उनको ध्यान में रखते हुए कृषिनीति में सिंचाई व फसल चक्र की व्यवस्था होना चाहिए। आज कृषि क्षेत्र में नगद फसलों के बढ़ते चरण के कारण भूजल का दोहन बड़ेस्तर पर हुआ है। पंजाब व हरियाणा इसके साक्षात उदाहरण हैं। राजस्थान में तरुण भारत संघ या महाराष्ट्र में रालेगांव सिद्धी ने जल संरक्षण का उल्लेखनीय कार्य किया है और उन्होने अपने क्षेत्रों में कम पानी की फसलों को प्रोत्साहित किया है। यह प्रयोग वहां के सामाजिक अनुशासन के कारण ही यह संभव हुआ है। म.प्र. के आदिवासी अंचल झाबुआ में सम्पर्क संस्था ने भी ग्रामीणों के साथ मिलकर भूजल के उपयोग के नियंत्रित उपयोग के प्रयास किये है। लेकिन सरकार की बाजारवादी नीतियों के रहते इस प्रकार के छोटे–छोटे प्रयास कितने समय तक टिक पायेंगे यह

अहम् सवाल है। अर्थात् सामाजिक अनुशासन को बनाये रखने के लिए सरकारी नीतियां व बाजार का भी नियंत्रित करना आवश्यक है। सरकार एक तरफ नगद फसलों को प्रोत्साहित करती है और दूसरी तरफ किसानों को कम पानी की फसल लगाने का मशविरा देती है। सरकार का यह खेल लम्बे समय तक चलने वाला नहीं है। आज किसान अपने खेत में क्या बोता है यह बाजार तय करता है, न कि किसान। अतः पानी को बचाने के लिए बाजार को नियंत्रित करना होगा। सरकार द्वारा जेनेटीकली मोडीफाइड (जीएम) फसलों को प्रोत्साहित किया जा रहा है जिन्हें अधिक पानी की आवश्यकता होती है। अतः सरकार को अपनी समस्त नीतियों को पूरक बनाना होगा। कहने का आशय यह है कि सरकार भूजल रिचार्ज पर चिन्ता करते समय इसके हो रहे डिस्चार्ज को भी ध्यान में रखे और इस प्रकार डिस्चार्ज की प्राथमिकता तय करे जो समाज के लिए ज्यादा आवश्यक है। एक तरफ सरकार गिरते भूजल स्तर पर चिन्ता व्यक्त करती है और जल बचाने के अभियान चलाती है। दूसरी तरफ ऐसे संयंत्रों को बड़े स्तर पर अनुमति दे रही है, जो भूजल के अतिदोहन पर निर्भर हैं। इस प्रकार की दोमुही नीतियों के चलते जलभरण अभियान कभी सफल नहीं हो सकता। देश में जल पुनर्भरण की तुलना में भूजल के दोहन का आंकड़ा खतरनाक है। अब समय आ गया है कि देश में पानी के उपयोग की प्राथमिकता तय की जाये और उसे प्रभावी तरीके से से लागू भी किया जाये। इस संदर्भ में सामाजिक न्याय एवं सामाजिक नियंत्रण भी सुनिश्चित किये जाने की आवश्यकता है।

(लेखक राष्ट्रीय भूजल के कृत्रिम पुनर्भरण संबंधी परामर्शदात्री परिषद के सदस्य है।)

....

वन अधिकारों पर मान्यता का कानून 2006

भारत सरकार के द्वारा अनुसूचित जनजाति और परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों पर मान्यता) अधिनियम 2006 का राजपत्र में 2 जनवरी 2007 को प्रकाशन कर दिया गया है। कानून बनने के पूर्व दिनांक 15 दिसम्बर 2006 को लोकसभा एवं दिनांक 18 दिसम्बर 2006 को राज्य सभा ने विधेयक पारित किया जिस पर महामहीम राष्ट्रपति महोदय के द्वारा 29 दिसम्बर 2006 को अपनी स्वीकृति प्रदान की।

इस अधिनियम के तहत नियम बनाए जाने की प्रक्रिया पूरी नहीं हुई है नियम बनाए जाने के बाद ही इस कानून के तहत कार्यवाही किया जाना संभव हो पायेगा, हम यहां कानून के कुछ प्रमुख प्रावधानों का उल्लेख कर रहे है। ताकि उसका जन साधारण सहित वन विभाग राजस्व विभाग, आदिम जाति कल्याण विभाग एवं अन्य विभाग ध्यान रख सकें। अधिनियम की शब्दावली एवं हमारे द्वारा प्रस्तुत शब्दावली में अन्तर होने पर अधिनियम की शब्दावली ही अंतिम एवं मान्य होगी, इसका ध्यान रखा जाना सभी के लिए आवश्यक है।

इस अधिनियम की प्रस्तावना में ही यह स्पष्ट कर दिया गया है कि '' वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों, के मान्यता प्राप्त अधिकारों में दीर्घकालीन उपयोग के लिए जिम्मेदारी और प्राधिकार जैव विविधता का संरक्षण और परिस्थितिक संतुलन को बनाए रखना और वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों की जीविका तथा खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करते समय वनों के संरक्षण को सृदृढ़ बनाना भी है।

और औपनिवेशिक अवधि के दौरान तथा स्वतंत्र भारत में राज्य वनों को समेकित करते समय उनकी पैतृक भूमि पर वन अधिकार और उनके निवास को पर्याप्त रूप से मान्यता नहीं दी गई थी, जिसके परिणामस्वरूप उन वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियो और अन्य परम्परागत वन निवासियों के प्रति ऐतिहासिक अन्याय हुआ है जो वन परिस्थितिक प्रणाली को बचाने के लिए और बनाए रखने के लिए अभिन्न अंग हैं।

और यह आवश्यक हो गया है कि वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों जिनके अंतर्गत वे जनजातियां भी हैं जिन्हें राज्य के विकास से उत्पन्न हस्तक्षेप के कारण अपने निवास दूसरी जगह बनाने के लिए मजबूर किया गया था, की लम्बे समय से चली आ रही भूमि सम्बन्धी असुरक्षा तथा वनों में पहुंच के अधिकारों पर ध्यान दिया जाए।

भारत गणराज्य के सतानवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियम हो –

अधिनियम की धारा–2 में परिभाषाएं दी गई हैं –

धारा–2

(क) ''**सामुदायिक वन संसाधन**'' से ग्राम की परम्परागत या रूढ़िजन्य सीमाओं के भीतर रूढ़िजन्य सामान्य वनीाूमि या चारागाही समुदायों की दशा में भू–परिदृश्य का मौसमी उपयोग अभिप्रेत है, जिसके अंतर्गत आरक्षित वन, संरक्षित वन और संरक्षित ऐसे क्षेत्र की भूमि ही है जैसे अभ्यारण और राष्ट्रीय उद्यान जिन पर समुदायों की परम्परागत पहुंच थी।

(ख) ''**संकटपूर्ण वन जीव आवास**'' राष्ट्रीय उद्यानों और अभ्यारण्यों के ऐसे क्षेत्र अभिप्रेत हैं जहां वैज्ञानिक और वस्तुनिष मानदंडों के आधार पर मामले वार, विनिर्दिष्ट रूप से और स्पष्ट रूप से स्थापित किया गया है कि ऐसे क्षेत्र वन्य जीव संरक्षण के प्रयोजनों के लिए अतिक्रमणीय रखे जाने के लिए अपेक्षित हैं जैसा कि केन्द्रीय सरकार के पर्यावरण और वन मंत्रालय द्वारा एक ऐसी विशेषज्ञ समिति से खुले परामर्श की प्रक्रिया के बाद अवधारित और अधिसूचित की जाए। उक्त समिति में उस सरकार द्वारा नियुक्त उस परिक्षेत्र से विशेषज्ञ सम्मिलित होंगे जिसमें ऐसे क्षेत्रों का अवधारण करने में जनजातीय मंत्रालय का एक प्रतिनिधि भी सम्मिलित होगा और धारा 4 की उपधारा (1) और उपधारा (2) से उद्भूत प्रक्रियात्मक अपेक्षाओं के अनुसार होगी।

(ग) ''**वन में रहने वाली अनुसूचित जनजाति**'' से अनुसूचित जनजातियों के ऐसे सदस्य या ऐसे समुदाय अभिप्रेत हैं, जो मुख्यतः वनों में निवास करते हैं और जो जीविका की वास्तविक आवश्यकताओं के लिए वनों या वन भूमि पर आश्रित हैं और जिनके अंतर्गत अनुसूचित जनजाति चरागाही समुदाय भी हैं।

(घ) ''**वन भूमि**'' से वन क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली किसी प्रकार की भूमि अभिप्रेत है, और उसके अन्तर्गत अवर्गीकृत वन

विद्यमान असीमांकित या समझे गए वन, संरक्षित वन, आरक्षित वन, अभ्यारण और राष्ट्रीय उद्यान भी हैं।

(ड) ''**वन अधिकार**'' से धारा 3 में निर्दिष्ट वन अधिकार अभिप्रेत हैं।

(च) ''**वन ग्राम**'' में ऐसी बस्तियां अभिप्रेत हैं जो किसी राज्य सरकार के वन विभाग द्वारा संक्रियाओं के लिए वनों के भीतर स्थापित की गई है या जो वन आरक्षण प्रक्रिया के माध्यम से वन ग्रामों में संपरिपर्तित की गई है और जिनके अंतर्गत वन बस्ती ग्राम, नियम मांग धृति, सभी प्रकार की वन कृषि बस्तियां भी हैं चाहे वे ऐसे ग्रामों के लिए किसी नाम से ज्ञात हो और जिनके अंतर्गत सरकार द्वारा अनुज्ञात कृषि तथा अन्य उपयोगों के लिए भूमि भी है।

(छ) ''**ग्रामसभा**'' से ऐसे ग्रामसभा अभिप्रेत हैं, जो ग्राम के सभी वयस्क सदस्यों से मिलकर बनेगी, ऐसे राज्य की दशा में जिसमें कोई ग्राम पंचायत नहीं है, पाड़ा, टोला और अन्य पारम्परिक ग्राम समितियां हैं जिनमें स्त्रियों की पूरी और अनिबंधित भागीदारी है।

(ज) ''**आवास**'' के अन्तर्गत ऐसा क्षेत्र भी है जिसमें आदिम अनुसूचित जनजाति समूहों और कृषि पूर्व समुदायों और अन्य वनवासी अनुसूचित जनजातियों के परम्परागत आवास और आरक्षित वनों और संरक्षित वनों में ऐसे अन्य आवास सम्मिलित है।

(झ) ''**लघु वन उत्पाद**'' के अन्तर्गत पादप मूल के सभी गैर ईमारती वनोत्पाद हैं, जिनमें, बांस, झाड़, झरखण्ड, ठूंठ, बैंत, तुसार, कोया, शहद, मोम, लाख, तेंदू या केंदू पत्ते, औषधीय पौधे और जड़ी बूटियां, मूल, कन्द और इसी प्रकार के उत्पादन सम्मिलित हैं।

(ड) ''**नोडल अभिकरण**'' से धारा 11 में विनिर्दिष्ट नोडल अभिकरण अभिप्रेत है।

(ट) ''**अधिसूचना**'' से राजपत्र में प्रकाशित कोई अधिसूचना अभिप्रेत है।

(ठ) ''**विहित**'' से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत हैं।

(ड) ''**अनुसूचित क्षेत्र**'' से संविधन के अनुच्छेद 244 के खण्ड (1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्र अभिप्रेत हैं।

(ण) ''**परम्परागत वन निवासी**'' से कोई सदस्य या कोई समुदाय अभिप्रेत है जो 13 दिसम्बर 2006 में पूर्व कम से कम तीन पीढ़ियों से प्राथमिक रूप से निवास करता रहा है और जो वनों या वन भूमि पर वास्तविक आजीविका की आवश्यकताओं के लिए निर्भर है।

अधिनियम के अध्याय 2 वन अधिकार में अनुसूचित जन जातियों एवं अन्य परम्परागत वन निवासियों को प्रदान किए गए वन अधिकारों का उल्लेख किया गया है।

धारा–3

(1) इस अधिनियम में प्रयोजनों के लिए, वन्य में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों के और अन्य परम्परागत वन निवासियों सभी वनभूमि पर निम्नलिखित वन अधिकार होंगे जो व्यष्टिक या सामुदायिक भूधृति या दोनों को सुरक्षित करते हैं, अर्थात् –

(क) वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातिया और अन्य परम्परागत वन निवासियों के किसी सदस्य या किन्हीं सदस्यों द्वारा निवास के लिए या स्वकृषि के लिए व्यक्तिगत या सामूहिक अधिभोग के अधीन वन भूमि को धारित करने और उसमें रहने का अधिकार।

(ख) निस्तार के रूप मे सामुदायिक अधिकार चाहे किसी भी नाम से ज्ञात हों, जिनके अंतर्गत तत्कालीन राजाओं के राज्यों, जमींदारी या ऐसे अन्य मध्यवर्ती शासनों में उपयोगाधीन अधिकार भी सम्मिलित है।

(ग) लघु वन उत्पादों के स्वामित्व का अधिकार उन्हें संग्रहीत करने के लिए पहुंच, उनका उपयोग और व्यय जिन्हें गांव की सीमा के भीतर या बाहर पारंपरिक रूप से संग्रहित किया जाता रहा है।

(घ) मत्स्य और जलाशयों के अन्य उत्पाद चारागाह (स्थापित और घुमक्कड़ दोनों) के उपयोग या उन पर हकदारी के अन्य सामुदायिक अधिकार और यायावरी या चारागाही समुदायों की पारम्परिक मौसमी संसाधनों तक पहुंच।

(ड) आदिम जनजाति समूहों और कृषि पूर्व समुदायों के लिए बसने और बस जाने का अधिकार जिसके अंतर्गत सामुदायिक भूधृतियां भी हैं।

(च) किसी ऐसे राज्य में जहां दावे विवादित हैं, किसी भी नाम विधान के अधीन विवादित भूमि उस पर अधिकार।

(छ) वन भूमि पर हक के लिए किसी स्थानीय प्राधिकरण या किसी राज्य सरकार द्वारा जारी पट्टों या धृतियों या अनुदानों

के सपरिवर्तन के लिए अधिकार।

(ज) वनों के सभी वनग्रामों, पुराने आवासों, असर्वेक्षित ग्रामों के बसने और सपरिवर्तन के अधिकार चाहे वे राजस्व ग्रामों में लेखबद्ध हों, अधिसूचित हों अथवा नहीं।

(झ) किसी सामुदायिक वन संसाधों का संरक्षण, पुर्नरूजीवित, संरक्षित या प्रबंध करने का अधिकार जिसका वे सतत् उपयोग के लिए परम्परागत रूप से सुरक्षा और संरक्षण कर रहे हैं।

(ण) ऐसे अधिकार जिनका किसी राज्य की विधि या सिकी स्वशासी जिला परिषद या स्वशासी क्षेत्रीय परिषद के विधियों के अधीन मान्यता दी गई है या जिन्हें किसी राज्य की सम्बधित जनजाति की किसी पारम्परिक या रूढ़िगत विधि के अधीन जनजातियों के अधिकारों के रूप में स्वीकार किया गया है।

(ट) जैव विविधता तथा पहुंच का अधिकार और वन जैव विविधता तथा सांस्कृतिक विविधता से सम्बन्धित बौद्धिक संपदा और पारम्परिक ज्ञान हैं सामुदायिक अधिकार।

(ठ) वहीं पर पुनर्वास का अधिकार जिसके अंतर्गत उन मामलों में आनुकल्पिक भूमि भी है जिनमें वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों को 13 दिसम्बर 2005 के पूर्व किसी भी प्रकार की वनभूमि से पुनर्वास के उनके वैध हक दिए बिना अवैध रूप से बेदखल या विस्थापित किया गया हो।

(ड) ऐसे अन्य पारम्परिक अधिकार जिनका रूढ़िगत रूप से उपभोग यथासिति, वन में रहने वाली उन अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों द्वारा किया जा रहा है जो खंड (क) से खंड (ट) में वर्णित हैं किनतु उनमें किसी प्रजाति के वन्य जीव का शिकार करने और उन्हें फंसाने या उनका शरीर का कोई भाग निकालने का परम्परागत अधिकार नहीं है।

(2) वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार वन भूमि के लिए सरकार द्वारा व्यवस्थित निम्नलिखित सुविधाओं के लिए परिवर्तन का उपबंध करेगी जिनके अंतर्गत प्रति हेक्टेयर पचहत्तर से अनधिक पेड़ों का गिराया जाना सम्मिलित हैं, अर्थात –

(क) स्कूल, (ख) औषधालय या अस्पताल, (ग) आंगनबाड़ी, (घ) उचित मूल्य की दुकान, (ड) विद्युत या दूरसंचार की लाईन, (च) टैंक और लघु जलाशय, (छ) पेयजल की आपूर्ति और जल पाईपलाईन, (ज) जल सर वर्षा जल संचयन संरचनाए, (झ) लघु सिंचाई लहरें, (ण) अपारम्परिक ऊर्जा के स्त्रोत, (ट) कुशल उन्नयन, (ठ) सड़क और (ख) सामुदायिक केन्द्र।

परन्तु वन भूमि के ऐसे परिवर्तन को तभी अनुज्ञात किया जाएगा जब यदि वह (1) इस उपधारा में वर्णित प्रयोजनों के लिए परिवर्तित की जाने वाली वनभूमि ऐसे प्रत्येक मामले में एक हेक्टेयर से कम नहीं है और, (2) ऐसी विकासशील परियोजनाओं की अनापत्ति इस शर्त के अधीन रहते हुए होगी कि उसकी सिफारिश ग्राम सभाओं द्वारा की गई हो।

अधिनियम के अध्याय 3 ''वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों के वन अधिकारों की मान्यता और उनका निहित होना'' के अन्तर्गत

धारा 4

(1) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी और इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुऐ केन्द्रीय सरकार,

(क) राज्यों या राज्यों के उन क्षेत्रों में निवास कर रही वन में रहने वाली जनजातियां जहां उन्हें धारा 3 में उल्लिखित सभी वन अधिकारों के बावत् अनुसूचित जनजातियों के रूप में घोषित किया गया है।

(ख) धारा 3 में उल्लिखित सभी वन अधिकारों के बावत् अन्य पारम्परिक वन निवासी।

(2) राष्ट्रीय उद्यानों और अभ्यारणों के संकटपूर्ण वन्य जीव आवास में इस अधिनियम के अधीन मान्यता प्राप्त वन अधिकारों को पश्चात्वर्ती रूप में उपान्तरित या निश्चित कर सकते हैं, परन्तु कोई अधिकार धारक पूर्णव्ययत स्थित नहीं होगा या किसी भी रीति में उनके अधिकार वन जीव संरक्षण के लिए अनतिक्रमणीय क्षेत्रों के सृजन के प्रयोजनों पर सभी मामलों में निम्नलिखित दशाओं के समाधान होने के सिवाय प्रभाव नहीं डालेंगे अर्थात्

(क) धारा 6 में यथा विनिर्दिष्ट मान्यता और निहित अधिकारों की प्रक्रिया विचाराधीन सभी क्षेत्रों में पूरी हो,

(ख) यह वन्य जीव संरक्षण अधिनियम, 1972 के अधीन शक्तियों के प्रयोग में राज्य सरकार से संबद्ध अभिकरणों द्वारा

स्थापित किया गया है कि अधिकार उपस्थित धारकों के वन्य पशुओं पर क्रियाकलाप या प्रभाव अनुक्रमणीय नुकसानी काने के लिए पर्याप्त है और उक्त प्रजाति और उनके निवास के अस्तित्व के लिए खतरा है।

(ग) राज्य सरकार यह निष्कर्ष निकाल चुकी है कि अन्य युक्ति युक्त विकल्प जेसे सह अस्तित्व उपलब्ध नहीं है,

(घ) पुर्नव्यवस्था या अनुकल्पनीय पैकेज तैयार और संसूचित किया गया है प्रभावी ब्यौष्टियों तथा समुदायों के लिए जीविका सुनिश्चित करने का उपबंध है और ऐसे प्रभावी ब्यौष्टियों की अपेक्षाओं को पूरा करता है तथा केन्द्रीय सरकार की सुसंगत विधियों और नीति में दिए गए समुदाय हैं।

(ड) प्रस्तावित पुर्नव्यवस्था और पैकेजों के लिए संबद्ध क्षेत्र में ग्रामसभा की स्वतंत्र सूचित सहमति लिखित में प्राप्त की गई।

(च) कोई पुर्नव्यवस्था जब तक नहीं होगी तब तक की पुर्नव्यवस्था अवस्थिति पर सुविधाएं और भूमि आवंटन वायदा किए गए पैकेट के अनुसार पूरी न की गई हो,

परन्तु संकटपूर्ण वनजीव आवास जिससे अधिकार धारक वन्यजीव संरक्षण के प्रयोजनों के लिए पुर्नव्यवस्थित होते हैं, उन्हें प्श्चातवर्ती राज्य सरकार व केन्द्रीय सरकार या सिकी अन्य उपयोगों के लिए किसी एक का अपवर्तन नहीं करेगी।

(3) वन भूमि और उसके निवसियों की बाबत् किसी राज्य या संघ राज्य के क्षेत्र के संबंध में वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परम्परागत वन निवासियों को इस अधिनियम के अधीन वन अधिकारों की मान्यता देना और उनका निहित किया जाना इस शर्त के अधीन होगी कि ऐसी जनजातियों और जनजाति समुदायों या अन्य परम्परागत वन निवासियों ने 13 दिसम्बर 2005 से पहले वन अधिभोग में ले लिया था।

(4) उपधारा (1) द्वारा प्रदत्त कोई अधिकार आनुवांशिक होगा, किन्तु संक्रमणीय या अन्तरणीय नहीं होगा और विवादित व्यक्तियों की दशा में पति–पत्नी दोनों के नाम में संयुक्त रूप से और यदि किसी घर का मुखिया एकल व्यक्ति है तो एकल मुखिया के नाम से रजिस्ट्रीकृत होगा तथा सीधे उत्तराधिकारी में अनुपस्थिति में उत्तराधिकार योग्य अधिकार अलग नातेदार को चला जाएगा।

(5) जैसा अन्यथा उपबन्धित है उसके सिवाय, किसी वन में रहने वाली अनुसूचित जनजाति या अन्य परम्परागत वन निवासियों का कोई सदस्य वन भूमि से तब तक बेदखल नहीं किया जाएगा या हटाया नहीं जाएगा तब तक मान्यता और सत्यापन प्रक्रिया पूरी नहीं की जाती है।

(6) जहां उपधारा (1) द्वारा मान्यता प्राप्त या निहित वन अधिकार धारा 3 की उपधारा (1) के खण्ड (क) में वर्णित भूमि के सम्बध में है, वहां ऐसी भूमि इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख को किसी व्यष्टि या कुटुम्ब या समुदाय के अधिभोगाधीन होगी, ऐसी भूमि वास्तविक कब्जे के अधीन क्षेत्र तक निर्बन्धित होगी और किसी भी दशा में चार हेक्टेयर से अधिक का क्षेत्र नहीं होगा।

(7) वन अधिकार, सभी भारों और प्रक्रियात्तक अपेक्षाओं से मुक्त रूप से प्रदत्त किया जाएगा, जिसमें वन (सरक्षण) अधिनियम, 1980 के अधीन अनापत्ति जिसमें इस अधिनियम में विनिर्दिष्ट के सिवाय ''शुद्ध वर्तमान मूल्य'' के संदाय की अपेक्षा और वन भूमि मे अपवर्तन के लिए प्रतिकारात्मक वन रोपण सम्मिलित हैं।

(8) अधिनियम के अधीन मान्यता प्राप्त और निहित वन अधिकारों में वन निवास करने वाले अनुसूचित जनजातियों या अन्य परम्परागत वन निवासयिों के वन भूमि अधिकार सम्मिलित होंगे जो यह साबित कर सकेंगे कि वे राज्य विकास हस्तक्षेप के कारण भूमि प्रतिकर के बिना उनके रहने के स्थान और कृषि से विस्थापित किए गए थे और जहां भूमि का उपयोग उक्त अर्जन से पांच वर्ष के भीतर उस प्रयोजन के लिए नहीं किया गया है जिसके लिए वह अर्जित की गई थी।

धारा 5

(1) किसी वन्य अधिकार के धारक, ग्रामसभा और ग्राम स्तर की संस्थाएं उन क्षेत्रों में जहां इस अधिनियम के अधीन किन्हीं वन अधिकारों के धारक हैं निम्नलिखित के लिए सशक्त हैं –

(क) वन्य पशु, वन और जैव विविधता का संरक्षण करना,

(ख) यह सुनिश्चित करना कि अनुलग्न जलाागम क्षेत्र, जल स्त्रोत और अन्य पारिस्थतिक विज्ञान संवेदनशील क्षेत्र पर्याप्त रूप से संरक्षित हैं,

(ग) यह सुनिश्चित करना कि वन में रहने वाली अनुसूचित जनजातियों के निवासी और अन्य परम्परागत वन निवासी किसी प्रकार की ध्वन्सात्मक प्रक्रियाओं से संरक्षित है जो उनकी सांस्कृतिक और वास्तविक विरासत को प्रभावित करती हैं,

(घ) यह सुनिश्चित करना कि सामुदायिक वन संसाधनों की पहुंच को विनिययमित करने के लिए और सिकी क्रियाकलाप को रोकना जो वन्य पशु, वन और जैस विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं और जैव विविधता का पालन करने के लिए ग्रामसभा में विनिश्चय करना।

अधिनियम के अध्याय 4 में वन अधिकारों को निहित करने के लिए प्राधिकारी एवं प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है।

धारा 6

(1) ग्राम सभा को, किसी व्यष्टि, सामुदायिक वन्य अधिकार या दोनों की प्रकृति और सीमा को अवधारित करने के लिए प्रक्रिया आरंभ करने का प्राधिकार होगा जो इस अधिनियम के अधीन इसकी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर अनुसूचित जनजातियों के वन निवासियों को, दावे स्वीकारते हुए, उनके समेकन और सत्यापन तथा ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, सिफारिश किए गए प्रत्येक दावे के क्षेत्र का सीमांकन करते हुए, मानचित्र तैयार करके दिया जा सकेगा और ग्रामसभा उस भाव का संकल्प पारित तथा उसके पश्चात् उसकी एक प्रति उसी उपखण्ड समिति को अग्रेषित करेगी।

(2) ग्राम सभा के संकल्प द्वारा कोई व्यक्ति उपधारा (3) के अधीन गठित उपखण्ड स्तर समिति को कोई याचिका कर सकेगा और उपखण्ड स्तर समिति ऐसी चायिका पर विचार करेगी और उसका निपटान करेगी, परन्तु प्रत्येक ऐसी याचिका ग्रामसभा द्वारा संकल्प के जारित करने की तारीख से साठ दिनों के भीतर की जाएगी, परन्तु यह और कि चायिका का व्यथित व्यक्तियों के विरूद्ध निपटान तक तक नहीं किया जाएगा, जब तक उसे मामले को प्रस्तुत करने के लिए युक्तियुक्त अवसर नहीं दे दिया जाता है।

(3) राज्य सरकार, ग्रामसभा द्वारा पारित संकल्प की परीक्षा करने के लिए एक उपखंड स्तर समिति का गठन करेगी और वन अधिकारों का अभिलेख तैयार करेगी तथा इसे उपखण्ड अधिकारी की मार्फत किसी अंतिम विनिश्चय के लिए जिला स्तर समिति को अग्रेषित करेगी।

(4) उपखण्ड स्तर समिति के विनिश्चय द्वारा व्यथित कोई व्यक्ति, उपखंड स्तर समिति के विनिश्चय की तारीख से साठ दिनों के भीतर जिला स्तर समिति को कोई याचिका कर सकेगा और जिला स्तर समिति ऐसी याचिका पर विचार करेगी और उसका निपटान करेगी,

परन्तु कोई याचिका ग्रामसभा के संकल्प के विरूद्ध जिला स्तर समिति के समक्ष प्रत्यक्ष तब तक नहीं की जाएगी जब तक वह उपखंड स्तर समिति के समक्ष न कि गई हो और उस पर विचार न कर लिया गया हो, परन्तु यह और कि याचिका का व्यथित व्यक्तियों के विरूद्ध निपटान तब तक नहीं किया जाएगा जब तक उसे मामले को प्रस्तुत करने के लिए युक्तियुक्त अवसर नहीं दे दिया जाता।

(5) राज्य सरकार, उपखंड स्तर समिति द्वारा तैयार किए गए वन्य अधिकारों के अभिलेख पर विचार करने और उनका अंतिम रूप से अनुमोदन करने के लिए एक राज्य स्तर समिति का गठन करेगी।

(6) वन अधिकार के अभिलेख पर जिला स्तर समिति का विनिश्चय अंतिम और आबद्धकर होगा।

(7) राज्य सरकार, वन्य अधिकारों को मान्यता देने और उन्हें निहित करने की प्रक्रिया को मानीटर करने और ऐसी विवरणणियों और रिपोर्टों को, उस अभिकरण द्वारा मांगी जाए, नोडल अभिकरण को प्रस्तुत करने के लिए एक राज्य स्तर की मानीटरी समिति का गठन करेगी।

(8) उपखण्ड स्तर समिति, जिला स्तर समिति और जिला सतर मानीटरी समिति राज्य सरकार के राजस्व, वन और जनजातीय मामलों के विभागों के अधिकारियों और समुचित स्तर पर पंचायती राज संस्थान के तीन सदस्य होंगें जिन्हें संबधित पंचायती राज संस्थाओं द्वारा नियुक्त किया जाएगा, जिसमें दो अनुसूचित जनजातियों से और कम से कम एक महिला होगी, जो वहित की जाए।

(9) उपखण्ड स्तर समिति, जिला स्तर समिति और राज्य स्तर मानीटरी समिति की संरचना और कृत्य तथा उनके कृत्यों के निर्वहन में अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया वह होगी, जो विहित की जाए।

दूसरी राष्ट्रीय जन स्वास्थ्य सभा की ओर .....

(भूमण्डलीकरण के दौर में जन स्वास्थ्य की रक्षा)

सन् 2000 तक 'सभी के लिए स्वास्थ्य' का सपना जो कि तत्कालीन सोवियत संघ के शहर अल्माआटा में सन् 1978 में दुनिया के कई देशों के प्रमुखों ने सामूहिक तौर पर देखा था वह आज तक साकार नहीं हो सका है। आज दुनिया के तमाम देशों खासकर गरीब और विकासशील देशों में स्वास्थ्य के मानकों की जो स्थिति है उसे बयां करना मुश्किल है। भारत भी ऐसे ही देशों की कतार में शामिल है जहां आज भी समूचा स्वास्थ्य तंत्र स्वयं कई बीमारियों से ग्रसित है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के पूर्व महासचिव डॉ. हाफडन माहलर ने एक बार स्वास्थ्य को एक राजनीति बताया था। इस उक्ति को वर्तमान समय वैश्विक स्तर पर सच साबित कर रहा है। स्वास्थ्य भी राजनीति से किस कदर प्रभावित होता है यह हमें गुजरी सदी के आखिरी दशक से और भी क्रूरतम ढंग से समझ में आने लगा है।

भूमण्डलीकराण की वैश्विक प्रक्रिया ने स्वास्थ्य को गरीब व विकासशील देशों के लिए एक ऐसे शाहीपन में तब्दील किया है कि आम व्यक्ति इसको पाने की कल्पना भी मुश्किल से कर सके। बढ़ता निजीकरण, टूटता प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं का ढांचा, बजट और स्टाफ की लगातार कमी, बौद्धिक सम्पदा अधिकार के नाम पर दवाओं के दाम में मनमानी, गहराते कृषि संकट व विकृत जन वितरण प्रणाली से उपजती गंभीर खाद्य असुरक्षा कुछ ऐसी दुर्घटनाएं हैं जो लगातार ढांचागत समायोजन कार्यक्रम के नाम पर विदेशी कम्पनियों के दबाव में उपजाई जा रही हैं। इनके चलते देश के आम और गरीब व्यक्ति के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती उसका जीवित रहना हो गया है।

बीती सदी के अंतिम दशक से प्रारंभ हुई उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रियाओं से उपजने वाली समस्याओं के इशारे गुजरी सदी के अंत तक बखूबी मिलने लगे थे। जन स्वास्थ्य अभियान द्वारा देश के स्वास्थ्य तंत्र में नव उदारवादी नीतियों के रोगों को सन् 2000 के अंत में आयोजित पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य असेम्बली में स्पष्टता से पहचान लिया गया था। सन् 2007 की शुरुआत पर हम यह समझ पाने में समर्थ हैं कि पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य असेम्बली के अंदेशे गलत नहीं थे। विगत छह वर्षों में देश के विभिन्न राज्यों में (राष्ट्रीय स्तर पर भी) जन स्वास्थ्य अभियान द्वारा लोगों के गिरते हुए स्वास्थ्य सेवाओं के सतत् लोप होते जाने की साजिशों को बेनकाब किया जाता रहा है।

वर्तमान समय में भूमण्डलीकरण के गहराते खतरों से स्वास्थ्य तंत्र पर पड़ते बुरे प्रभावों, उनके प्रतिरोध के स्वरूपों व विकल्पों की रचनाओं जैसे वृहद् उद्देश्यों के मद्देनजर दूसरी जन स्वास्थ्य असेम्बली का आयोजन अनिवार्य बन पड़ा है।

दूसरी राष्ट्रीय जन स्वास्थ्य असेम्बली की ओर .....

पहली राष्ट्रीय जन स्वास्थ्य सभा का आयोजन कोलकाता में 30 नवम्बर व 1 दिसम्बर सन् 2000 को किया गया था। इसके तत्काल बाद विश्व जन स्वास्थ्य असेम्बली बांग्लादेश में आयोजित हुई थी।

पहली असेम्बली में ''जन स्वास्थ्य अभियान'' का राष्ट्रीय ढांचा तैयार हुआ जिसके तहत् विभिन्न राज्य इकाइयां भी अस्तित्व में आई। प्रथम असेम्बली में अल्माआटा के नारे ''सबके लिए स्वास्थ्य'' को प्राथमिकता देने हुए विमर्श किया गया कि सन् 2000 तक स्वास्थ्य सभी के हिस्से में क्यों न आ सका? इस असेम्बली में बीस सूत्रीय जन स्वास्थ्य चार्टर भी पारित किया गया जो स्वास्थ्य तंत्र का जन आधारित स्वरूप कैसा हो, को इंगित करता है।

पहली असेम्बली से अब तक का गुजरा हुआ समय बहुत चुनौतीपूर्ण रहा है। राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के बदलावों ने स्वास्थ्य को भी तीव्रता से प्रभावित किया है। भूमण्डलीकरण की राजनैतिक / आर्थिक प्रक्रियाओं के अन्तर्गत स्वास्थ्य पर भी कई असर पड़े हैं। जन स्वास्थ्य अभियान ने इन परिस्थितियों और अपनी गतिविधियों के आधार पर यह तय किया कि विगत् छह वर्षों में अभियान के अनुभवों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कर आपसी समझ को साझा किया जाए। इसके अतिरिक्त 'भूमंडलीकरण के दौर में लोगों के स्वास्थ्य की रक्षा'' करने की रणनीतियां कैसी हो, को तय किया जा सके। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अभियान दूसरी राष्ट्रीय जन स्वास्थ्य असेम्बली की ओर अग्रसर हुआ है। इसमें विमर्श के साथ विकल्पों की तलाश को प्राथमिकता दी जानी है। असेम्बली का केन्द्रीय नारा ''भूमण्डलीकरण के दौर में जन स्वास्थ्य की रक्षा'' रहेगा। इसमें पूरे देश से लगभग 2000 प्रतिनिधियों के भाग लेने की संभावना है। इस आयोजन में दक्षिण अमेरिकी, अफ्रीकी एवं अन्य देशों के लोग भी भागीदारी करेंगे। असेम्बली के आयोजन समिति में राष्ट्रीय स्तर पर 21 नेटवर्क एवं संस्थाओं का जुड़ाव है। लगभग एक हजार संस्थान एवं संगठन अभियान के सहभागी हैं।

दूसरी असेम्बली के उद्देश्य

- जन स्वास्थ्य अभियान के विगत् छह वर्षों के अनुभवों का आलोचनात्मक विश्लेषण।
- जन स्वास्थ्य अभियान के व्यापक फैलाव व सांगठनिक मजबूती पर गहन विमर्श।
- लैटिन अमेरिका, एशिया एवं अफ्रीका में जारी समान आंदोलनों के अनुभवों को समझना।
- स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं तथा आम जन में वर्तमान व वैकल्पिक स्वास्थ्य परिवेश की वैज्ञानिक व राजनैतिक समझ उपजाना।
- समान मुद्दों पर देश में कार्यरत अन्य संगठनों, नेटवर्क के साथ बेहतर सामंजस्य बनाने के प्रयास।
- स्वास्थ्य के प्रमुख निर्धारकों पर कार्यरत संगठनों, आंदोलनों से सम्बद्धता विकसित कर साझा रणनीति बनाना।
- विकासखण्ड, जिला, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तरों पर जन स्वास्थ्य योजना बनाने की प्रक्रिया को शुरू करना।
- राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय स्तरों पर राजनैतिक प्रतिनिधियों को महत्वपूर्ण मांगों और कार्य योजनाओं से अवगत कराने हेतु संवाद बनाना।

सम्भावित योजना/ विचारणीय मुद्दे

- भूमण्डलीकरण के दौर में स्वास्थ्य के ढांचे का निजीकरण, सार्वजनिक स्वास्थ्य ढांचे में बिखराव, आवश्यक दवाओं की अनुपल्धता की राजनीति, महिला एवं बाल स्वास्थ्य, भोपाल गैस त्रासदी से उपजी स्वास्थ्य समस्याएं, विस्थापन और स्वास्थ्य, अन्तर्महाद्वीपीय चर्चा में विभिन्न देशों के साथ अनुभवों का आदान–प्रदान व अन्य।
- तीन दिनों में कई समानान्तर कार्यशालाएं, समूह चर्चाएं व संगोष्ठियां।
- प्रदर्शनी, कलाजत्था व सांस्कृतिक कार्यक्रम।

कार्यक्रम को प्रायोजित करना

सम्मेलन में स्वास्थ्य से जुड़े किसी मुद्दे पर कोई संस्था कार्यशाला, सेमिनार या चर्चा का आयोजन कर सकती है। इसके लिए दिल्ली कार्यालय से सम्पर्क कर 100 व्यक्तियों की क्षमता वाले हॉल के लिए मात्र पच्चीस हजार रुपये की सहयोग राशि देनी होगी। स्टॉल लगाने के लिए भोपाल कार्यालय से सम्पर्क किया जा सकता है। 10 गुणा 10 फीट के स्टाल के लिए मात्र दस हजार रुपये (अव्यावसायिक संस्थाओं से मात्र पांच हजार रुपये) की सहयोग राशि देनी होगी।

<u>आयोजन समिति कार्यालय</u>

जन स्वास्थ्य अभियान, म.प्र.

ई–7/32बी, एस.बी.आई. कॉलोनी, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)

फोन : +91–9893594378 उचरें/लीववहतवनचण्बवउ

<u>राष्ट्रीय कार्यालय</u>

दिल्ली साइन्स फोरम

डी–158, लोअर ग्राउण्ड फ्लोर, साकेत, नई दिल्ली– 110017

फोन : +91–11–26524324,26862716 बजककें/अेदसण्बवउ

....

ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना
जिलों के चयन में विसंगतियां

राजु कुमार

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून के तहत प्रथम चरण में राष्ट्रीय स्तर पर 200 जिलों में कानून को लागू किया गया, जिसमें मध्यप्रदेश के 18 जिलों को शामिल किया गया पर अति पिछड़े आदिवासी एवं दलित बहुल जिलों के रूप में चिन्हित और पात्रता के बावजूद अनूपपुर एवं बुरहानपुर का चयन नहीं किया गया जिसकी वजह से उन जिलों के लाखों लोग रोजगार से वंचित रह गये।

प्रदेश में 2 फरवरी, 2006 से कानून के क्रियान्वयन के लिए मध्यप्रदेश ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना को लागू किया गया। इस योजना के तहत् झाबुआ, मण्डला, उमरिया, शहडोल, बड़वानी, खरगोन, शिवपुरी, सीधी, टीकमगढ़, बालाघाट, छतरपुर, बैतूल, खण्डवा, श्योपुर, धार, सिवनी, डिण्डोरी और सतना शामिल हैं। कानूनी प्रावधानों के अन्तर्गत 2010 तक पूरे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में इस योजना को लागू करना है। कानून के लागू हुए एक साल से ज्यादा हो गया और अब दूसरे चरण में जिलों के चयन की प्रक्रिया भी पूरी हो गई पर अफसोसजनक बात यह है कि अनूपपुर एवं बुरहानपुर को योजना में शामिल नहीं किया गया। उन जिलों के चयन का आधार सन् 2001 की जनगणना एवं भौगोलिक स्थिति थी। इसमें अविभाजित पूर्वी निमाड़ (खण्डवा) एवं शहडोल को शामिल किया गया था पर जब यह योजना लागू हुई, तब उक्त दोनों जिलों का विभाजन हो गया और शहडोल से अलग हुए अनूपपुर एवं पूर्वी निमाड़ से अलग हुए बुरहानपुर को योजना से नहीं जोड़ा गया। योजना को पूर्व की स्थिति में लागू करने से अविभाजित शहडोल और पूर्वी निमाड़ को अनूपपुर एवं बुरहानपुर की जनसंख्या एवं क्षेत्र के आधार पर संसाधन आवंटित किये गये, जिसकी वजह से उक्त दोनों जिलों के लाखों ग्रामीणों को लाभ नहीं मिल पाया। शुरुआती विसंगतियों के बावजूद यह माना जा रहा था कि कुछ दिनों बाद उन जिलों को योजना में शामिल किर लिया जाएगा, पर अभी तक ऐसा नहीं हो पाया, जबकि इस योजना के वे हकदार भी हैं और उनकी जरूरतों के आधार पर तय संसाधनों को उनके पूर्ववर्ती जिलों को आवंटित भी कर दिया गया है। इस विसंगति को दुरुस्त नहीं किये जाने से उक्त दोनों जिलों के लाखों ग्रामीण इस योजना के लाभकारी उद्देश्यों से वंचित हैं। बुरहानपुर एवं अनूपपुर प्रदेश के अति पिछड़े जिलों में आते हैं। दोनों जिलों से पलायन की दर भी ज्यादा है। अनूपपुर के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे के लोगों की संख्या 50 फीसदी से ज्यादा है। 55584 लघु सीमान्त किसान एवं 16861 भूमिहीन मजदूर परिवार रहते हैं। हजारों लोगों को साल भर भरपेट भोजन नहीं मिल पाता। कमोबेश ऐसी ही स्थिति बुरहानपुर की है।

अनुपपुर में तो इस विसंगति को लेकर आंदोलन भी चलाये गये। सर्वोच्च न्यायालय के आयुक्त ने 24 मई, 2006 को ग्रामीण विकास विभाग को इस सम्बन्ध में एक पत्र भी लिखा था, जिसमें कहा गया था कि उन दोनों जिलों को योजना में शामिल किया जाये। जन संगठनों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के दबाव के बाद भारत के योजना आयोग और केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग ने इस भूल को स्वीकार कर दोनों जिलों को योजना में शामिल करने का फैसला कर लिया पर मध्यप्रदेश सरकार ने इस दिशा में कोई ठोस प्रयास नहीं किया, जिससे मामला अभी तक अटका हुआ है। अब योजना का दूसरा चरण लागू होने वाला है पर अभी भी इन दोनों जिलों को योजना में शामिल करवाने के प्रति सरकार की उदासीनता दिख रही है, जबकि स्वयंसेवी संस्थाएं एवं जन संगठन लगातार संघर्ष कर रहे हैं।

....

<u>लोक सूचना</u>

सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर केन्द्रीय सतर्कता समिति

(भारत के सर्वोच्च न्यायालय के आदेष के अन्तर्गत)

उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति मंत्रालय

1. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका (सिविल) क्रमांक 196 वर्ष (2001) के अन्तर्गत दिये गये आदेषानुसार भारत सरकार, उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति मंत्रालय ने सर्वोच्च न्यायालय के माननीय पूर्व न्यायाधीष न्यायमूर्ति श्री डी. पी. वाधवा की अध्यक्षता में एक केन्द्रीय सतर्कता समिति गठित की है। यह समिति ऐसी गड़बड़ियों और समस्याओं की जांच करेगी जिनसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली का सही क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है, साथ ही यह समिति प्रणाली के सुधार के लिये सुझाव भी प्रदान करेगी।

2. यह समिति राष्ट्रीय राजधानी प्रक्षेत्र दिल्ली में आम जनसमूह, संस्थाओं, गैर सरकारी संगठनों, इच्छुक समूहों के सदस्यों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली – इसमें उचित मूल्य की दुकानें, राष्ट्रीय राजधानी प्रक्षेत्र दिल्ली सरकार, दिल्ली राज्य नागरिक आपूर्ति निगम, खाद्य आपूर्ति और उपभोक्ता मामलों का विभाग भारत सरकार या सार्वजनिक वितरण प्रणाली से सम्बद्ध अन्य किसी प्राधिकरण/ संस्थान – के बारे में प्रस्तुत करने के लिये आमंत्रित करती है जिनसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली का उचित क्रियान्वयन प्रभावित हो रहा है। सुझाव एवं विचार निम्न सूत्रों के जरिये भेजे जा सकते हैं –

- ईमेल – cvcpds.fpd@nic.in
- फैक्स – 011 – 26494067
- केन्द्रीय सतर्कता समिति के सचिव को डाक के द्वारा

आपके सुझाव 20 फरवरी 2007 तक केन्द्रीय सतर्कता समिति के सभापति/ सचिव ,716 समिति कार्यालय, महाबीर ब्लाक, एशियाड विलेज काम्प्लेक्स (खेलगांव), सीरीफोर्ट रोड, नई दिल्ली – 110 016 को भेजें।

(एस.सी. रावल)
समिति सचिव

रिट याचिका (सी) न. 2001 की 196
अंतरिम आदेष (13 दिसम्बर, 2006)
पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज
बनाम्
भारतीय संघ एवं अन्य सर्वोच्च न्यायालय के आदेष

समेकित बाल विकास योजना (आई. सी. डी. एस.) के सन्दर्भ में दिये गए फैसले के मुख्य तत्व :

न्यायालय के समक्ष रखी गई प्रार्थना रिकार्डस को ध्यान में रखते हुए हम निर्देषित करते हैं कि :

1) भारत सरकार दिसम्बर, 2008 तक कम से कम 14 लाख आंगनबाड़ी केन्द्रों की स्वीकृति तथा संचालन अनिवार्य रूप से करे। ऐसा करते समय केन्द्र सरकार अनुसूचित जाति एवं जनजाति की बस्तियों को चिन्हित करके उनहें वरीयता दे।

2) भारत सरकार अनिवार्य रूप से यह भी सुनिष्चित करे कि आंगनबाड़ी केन्द्रों को खोलने के लिए जनसंख्या के निर्धारित मापदण्ड को बरकरार रखते हुए नये आंगनबाड़ी केन्द्र खोलने के लिए प्रति आंगनबाड़ी में जनसंख्या सीमा 1000 के मापदण्ड को बरकरार रखते हुए नये आंगनबाड़ी केन्द्र खोलने के लिए प्रति आंगनबाड़ी केन्द्र 300 की आबादी का ध्यान रखा जाये। जिन झुग्गि बस्तियों तथा गावों में 6 वर्ष से कम उम्र के 40 बच्चे हों और यदि वहां पर कोई आंगनबाड़ी नहीं है तो वहां मांग करने पर तुरन्त (3 महीने के अन्दर) आंगनबाड़ी केन्द्र खोला जाए।

3) आई.सी.डी.एस. के सर्वव्यापीकरण में आई.सी.डी.एस. के तहत सभी 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों, सभी गर्भवर्ती महिलाओं एवं धात्री माताओं तथा सभी किषोरियों को, आई.सी.डी.एस. के अन्तर्गत आने वाली सभी सेवाएँ (पूरक पोषण, विकास पर निगरानी, पोषण, स्वास्थ्य षिक्षा, टीकाकारण, पूर्व पाठषाला षिक्षा) उपलब्ध होनी चाहिए।

4) सभी राज्य सरकार तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों की सरकारें आई.सी.डी.एस. योजना को पूर्णतया लागू करें तथा प्रावधान करें
   - (अ) पूरक पोषण के लिए प्रति बच्चा प्रतिदिन कम से कम 2 रूपया व्यय किया जाये जिसमें से केन्द्रिय सरकार प्रति बच्चा प्रतिदिन 1 रूपये का योगदान करे।
   - (ब) गंभीर रूप से कुपोषित बच्चे के पूरक पोषण हेतु प्रति बच्चे पर प्रतिदिन 2.70 रूपये का प्रावधान हो तथा व्यय किया जाये। इसमें केन्द्रिय सरकार प्रत्येक बच्चे पर 1.35 रूपये प्रतिदिन का योगदान करें।
   - (स) प्रत्येक गर्भवती महिलाओं, धात्री माताओं तथा किषोरियों के पूरक पोषण के लिए 2.30 रूप्ये प्रतिदिन का प्रावधान हो, जिसमें से केन्द्र सरकार 1.15 रूपये के हिसाब से योगदान करे।

(5) बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेष, मणिपुर, पंजाब, पष्चिम बंगाल, असम, हरियाणा और उत्तर प्रदेष राज्यों के मुख्य सचिव न्यायालय के समक्ष उपस्थित होकर यह स्पष्ट करें कि आई.सी.डी.एस. की योजना को पूर्णतया लागू करने के इस न्यायालय के आदेष पर अमल क्यों नहीं किया गया है।

(6) सभी राज्य सरकारों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों की सरकारों के मुख्य सचिवों को यह निर्देष दिया जाता है कि वे शपथ पत्र दाखिल करके बतायें कि इस न्यायालय के 7 अक्टूबर, 2004 के आदेष के अनुपालन में कौन–कौन से कदम उठाये गये जिसमें यह निर्देष दिया गया था कि – '' पोषण सामग्री की आपूर्ति में ठेकेदारों का इस्तेमाल न किया जाये तथा आई.सी.डी.एस. फण्ड का व्यय अनाज को खरीदने तथा भोजन तैयार करने में करें, ग्रामीण समुदायों, स्वयं सहायता समूह और महिला मण्डल के द्वारा इसे वरीयतापूर्वक करें। '' राज्यों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों के मुख्य सचिव समयबद्ध योजना बनाकर बतायें जिसमें पोषण सामग्री की आपूर्ति का विकेन्द्रीकरण इस प्रकार हो कि स्थानीय समुदाय के हांथों में पहुंच जाये।

(7) यह एक गंभीर मामला है कि इस न्यायालय के 7 अक्टूबर 2004 के फैसले के अनुपालन के संदर्भ में 15 राज्यों/ केन्द शासित क्षेत्रों ने अपना शपथ पत्र दाखिल नहीं किया है। ये राज्य हैं – उड़ीसा, उत्तर प्रदेष, सिक्किम, अरूणाचल प्रदेष, नागालैण्ड, गोवा, पंजाब, मणिपुर, तामिलनाडु, आन्ध्रप्रदेष, मिजोरम, हरियाणा, बिहार, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, लक्षदीप है। चार हफ्तों के अन्दर इन राज्यों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों के मुख्य सचिव जवाब दें कि उनके खिलाफ की अवमानना करने के आरोप में क्यों न कार्रवाई की जाये।

इस मामले पर तीन माह बाद सुनवाई, होगी, इस समय तक केन्द्र सरकार, राज्य–केन्द्र शासित क्षेत्रों की सरकारें नवीनतम आंकड़ों के साथ रिपोर्ट दाखिल कर दें।

डा0 अरिजित पसायत

रिट याचिका (सी) न. 2001 की 196
अंतरिम आदेष (1 फरवरी 07)
पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज
बनाम्
भारतीय संघ एवं अन्य सर्वोच्च न्यायालय के आदेष
जननी सुरक्षा योजना के सन्दर्भ में दिये गए आदेश

वकीलों की बहस को सुनने के बाद अदालत ने निम्नलिखित निर्देष जारी किए –

याचिकाकर्ता की ओर से हाजिर हुए विद्वान वकील श्री कोलिन गोन्साल्विस और केंद्र व राज्य सरकार की ओर से पेष हुए विद्वान वकीलों को सुनने के बाद अदालत ने यह निर्णय दिया –

श्री कोलिन गोन्साल्विस ने एक विस्तृत ज्ञापन पेष किया है, जिसमें अदालत से कुछ दिषानिर्देषों का आग्रह किया गया है। खासतौर पर राष्ट्रीय मातृत्व सुरक्षा योजना और जननी सुरक्षा योजना के बारे में, जो कि आईए नंबर 37/2004 और आईए नंबर 54/2005 से संबंधित हैं। इस अदालत द्वारा नियुक्त किए गए आयुक्तों की रिपोर्ट और प्राप्त आंकड़ों के अनुसार यह स्पष्ट हो जाता है कि सवालों के दायरे में आई योजना के क्रियान्वयन के लिए व्यावहारिक रूप से एक भी कदम नहीं उठाया गया।

इसके अलावा जैसा कि प्रस्तुत जवाब में कहा गया है कि पर्याप्त निगरानी के अभाव में योजना को उस तरह से संचालित नहीं किया जा सका, जैसा कि तय किया गया था। अब योजनाओं को धन उपलब्ध कराने वाली केंद्र सरकार को श्री कॉलिन गोन्वाल्विस द्वारा पेष किए गए सुझावों पर जवाब प्रस्तुत करना चाहिए। यह भी स्पष्ट हुआ है कि दिल्ली समेत कुछ राज्यों में योजना के क्रियान्वयन में भारी लापरवाही बरती गई है और वहां लक्ष्य के तहत योजना का लाभ प्राप्त करने वाले हितग्रहियों की संख्या षून्य है।

इसके साथ ही उत्तरप्रदेष, उत्तरांचल, बिहार, दिल्ली, झारखंड, मध्यप्रदेष, छत्तीसगढ़, असम, राजस्थान, उड़ीसा और जम्मू–कष्मीर को भी इस बारे में अपना जवाब पेष करने का मौका मिलना चाहिए कि योजना के क्रियान्वयन में लापरवाही क्यों बरती गई। अपना जवाबी पेष करते समय केंद्र सरकार को यह सूचित करना होगा कि राज्यों द्वारा योजनाओं के क्रियान्वयन में उसकी ओर से निगरानी की क्या व्यवस्था प्रस्तावित है और योजनाओं के क्रियान्वयन के काम में समन्वय की कमी को किस तरह से दूर किया जा सकता है। याचिका के जवाब में केंद्र सरकार को यह भी सूचित करना होगा कि यदि उसकी ओर से आवंटित धनराषि को सीधे ग्राम पंचायतों के अधीन कर दिया जाए तो क्या वह हितग्राहियों के हित में होगा, ताकि बिना किसी लेटलतीफी के हितग्राही योजना का लाभ सीधे ही प्राप्त कर सकें। योजनाओं का उद्देष्य गर्भवती माताओं को पोषक आहार के लिए सहायता उपलब्ध कराना है। लेकिन आयुक्त की रिपोर्ट से यह मालूम होता है कि ग्रामीण इलाकों में योजनाओं के क्रियान्वयन में सबसे अधिक लापरवाही की जा रही है। अदालत की जानकारी में यह भी आया है कि जननी सुरक्षा योजना में भी कुछ बदलाव किए गए हैं, जो हितग्राहियों की जानकारी में नहीं लाए गए हैं। ऐसे में यह जरुरी है कि केंद्र और राज्य सरकार योजनाओं के बारे में हितग्राहियों की जानकारी बढ़ाने की दिषा में कदम उठाएं, ताकि उन्हें योजनाओं का लाभ दिलाया जा सके। इस बारे में केंद्र सरकार को तीन और राज्य सरकारों को चार सप्ताह के भीतर अपना जवाब पेष करना होगा। अपने जवाब में राज्य सरकारों को यह भी बताना होगा कि उन्होंने योजना के बेहतर क्रियान्वयन की दिषा में कौन से कदम उठाए और इस बारे में केंद्र और राज्य सरकार के बीच समन्वित प्रयास कैसे संभव हो सकते हैं।

अनुभवी वकील श्री कोलिन गोन्साल्विस को प्राप्त जवाबों का संकलन करने के लिए भी कहा गया है, साथ ही बेहतर नतीजों की दिषा में तरीके सुझाने को भी कहा गया है।

इस मामले की सुनवाई मार्च 2007 के तीसरे सप्ताह में होगा। अदालत द्वारा आयुक्तों के लिए मांगे गए बजट को नोट कर लिया गया है। इसकी एक कॉपी केंद्र सरकार के वकील को भी दे दी गई है। अब उन्हें आगे के निर्देष लेने को कहा गया है, ताकि सुनवाई की अगली तारीख तय की जा सके।

षषि सरीन मधु सक्सेना
कोर्ट मास्टर कोर्ट मास्टर